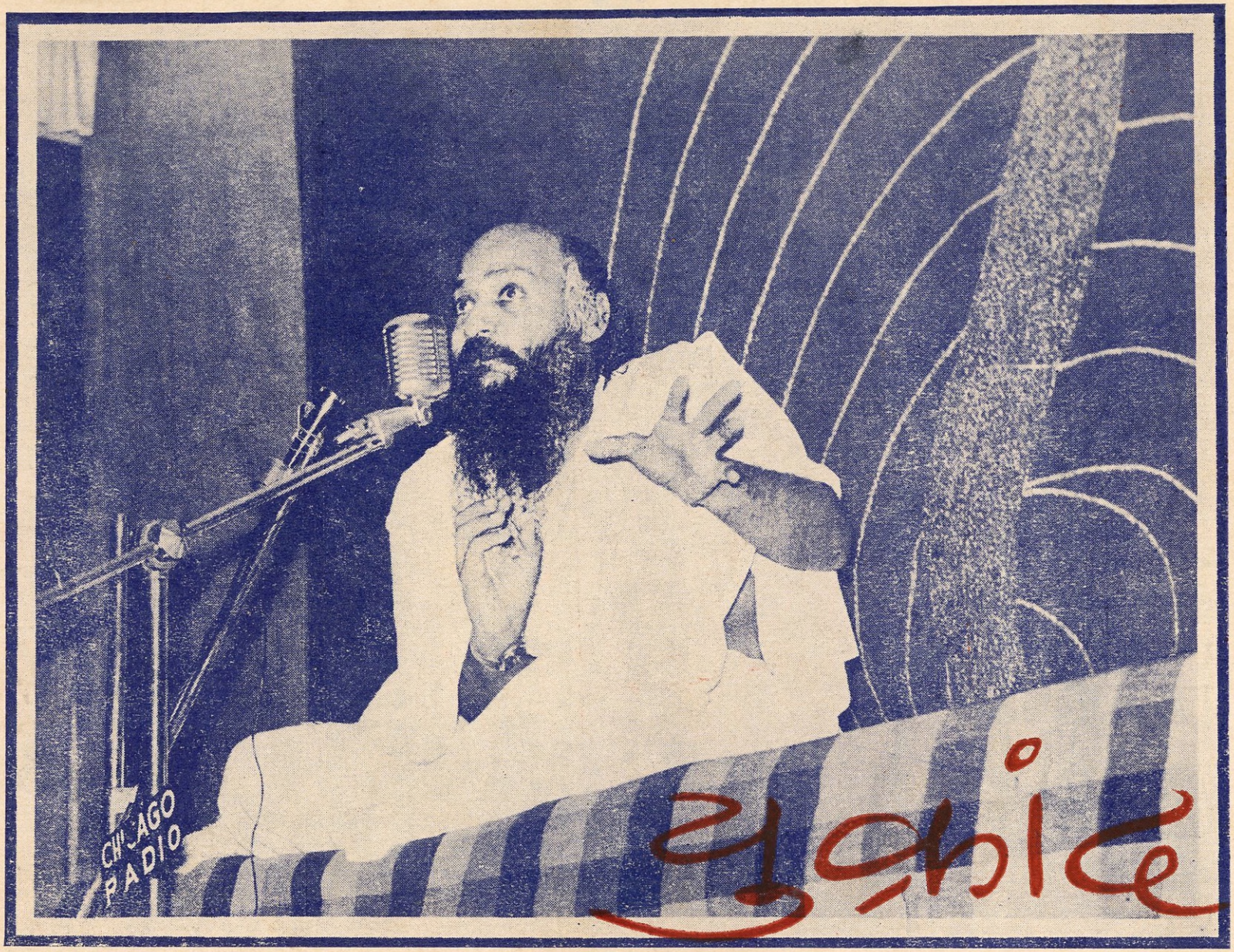

યુક્રાંદ

૧/૨૦ ૨૫-૪-૭૦

૨૦

"एक छोटा सा दिया—वर्षों से घिरे अंधकार को नष्ट कर देता है। ऐसे ही आत्मबोध की एक छोटी सी किरण भी—जीवन में घिरे जन्म-जन्म के अज्ञान को नष्ट कर देती है।"

– आचार्य श्री रजनीश

आत्मबोध और साधना का आचार्य श्री के सान्निध्य में_____ नारगोल (जिला : बलसार, गुजरात) में त्रिदिवसीय साधना शिविर आयोजित।

दिनांक : २, ३, ४ एवं ५ मई, १९७० ।

संपर्क सूत्र : जीवन जागृति केन्द्र, रूम नं ५३, एम्पायर बिल्डिंग,
डा० डी० एन० रोड, बम्बई-१, फोन : २६४५३०

(नोट : पिछले अंक की साधना शिविर न होने की सूचना को न माना जावे, क्योंकि प्रेमी साधकों के अति आग्रह के कारण शिविर आयोजित हो रहा है।)

(आवरण ले आउट : श्री हरीशचन्द्र, दिल्ली)

भौतिक विकास और आध्यात्म

(आचार्य श्री की जीवन चिंतना से)

● आप अधिभौतिक विकास (Material development) चाहते हैं आचार्य जी, या आध्यात्मिक विकास (Spiritual development) ?

मेरी दृष्टि में भौतिक विकास जो है वह आध्यात्मिक विकास की पहली सीढ़ी है। कोई भी देश, कोई भी समाज जब तक आर्थिक और भौतिक समृद्धि से भरा हुआ न हो, तब तक वहां कोई आध्यात्मिक विकास नहीं हो सकता है। नहीं हो सकता है इसलिए क्योंकि आध्यात्मिक विकास के लिए यह एक बुनियादी जरूरत है कि आदमी भौतिक रूप से समृद्ध हो। जब आदमी की रोटी, कपड़ा और छप्पर की चिन्ता पूरी हो जाती है, तब वह पहली दफा सोचता है कि अब क्या ? तब पहली दफा उसमें कोई आध्यात्मिक प्यास पैदा होती है।

अभी तो रोटी नहीं, कपड़ा नहीं, मकान नहीं मिल रहा उसे आप कह रहे हैं कि आत्मा परमात्मा की बातों का चिन्तन करो तो आप निहायत फिजूल बात कर रहे हैं। हिन्दुस्तान उन दिनों समृद्ध था जिन दिनों उसने धार्मिक चिंतन किया है और आध्यात्मिक विकास किया है। बुद्ध, महावीर या कृष्ण ये सारे के सारे लोग हिन्दुस्तान की पैदाइस हैं। ये सब शाही घरों के लड़के थे। जहाँ लग्जरी पूरी होती हैं और जिन्दगी की सब सीमायें जहां तृप्त हो जाती हैं वहाँ आदमी की जो खोज है वह ऊपर उठती है।

मेरी दृष्टि में आने वाले आध्यात्मिक विकास की जो भी संभावनायें हैं वे रूस और अमेरिका में ही फलित हो सकती हैं, हिन्दुस्तान में नहीं। अभी तक जैसा समझा जाता रहा है कि धार्मिक या आध्यात्मिक या दार्शनिक विकास और अधिभौतिक विकास विरोधी बातें हैं, ऐसा मैं नहीं मानता। मैं मानता हूं कि मैटेरियल डेव्हलपमेंट नैसेसरी डेव्हलमेंट है।

● यह कैसे हिन्दुस्तान में आयेगा ?

दो तीन बातें मुझे दिखाई पड़ती हैं। एक तो हिन्दुस्तान की पूरी चिंतना बदलना पड़ेगी। अभी हिन्दुस्तान समृद्धि का विरोधी है और गरीबी का पक्षपाती है जो कि अत्यंत मूढ़तापूर्ण बात है। तो पहले तो पूरे

मुल्क को यह दृष्टि देना पड़ेगी कि समृद्धि कोई अशुभ बात नहीं है, बल्कि समृद्धि होगी तो ही हम धार्मिक हो सकेंगे। अभी तो हमारे मन में बैठा हुआ है कि धार्मिक होने के लिए दरिद्र होना जरूरी है। यह बिलकुल पागलपन की बात है। पूरे मुल्क के मन से यह विचार निकाल देना है कि गरीबी कोई पूजा की चीज है या गरीब होना कोई बहुत अच्छी बात है या कि एक आदमी लंगोटी लगा कर खड़ा हो जाता है तो कोई महान कार्य कर रहा है अभी एक दरिद्रता का दर्शन हमारे चित्त में बैठा हुआ है--कम से कम में जिऊं, कम से कम आवश्यकता हो, छोटा से छोटा मकान हो। दाल रोटी खा ली और अपना एक चादर ओढ़ लिया और गुजारा कर लिया।

कम जरूरत जिन लोगों के ख्याल में बहुत महत्वपूर्ण है वे देश को दरि बना देंगे। मैं कहता हूं जरूरत बढ़ानी चाहिए। जरूरत इतनी बढ़ाओ कि तुम्हें उस जरूरत बढ़ाने की वजह से नये नये मार्ग खोजना पड़ें उस बढ़ी हुई जरूरत को पूरा करने के लिये। नई नई दिशायें खोजनी पड़ें तो ही समृद्धि की तरफ गति शुरू होती है। तो पहले दरिद्रता का दर्शन हटा कर उसकी जगह समृद्धि का दर्शन लाना जरूरी है। पहले तो मेंटली, मानसिक भूमिका तैयार करना पड़े तभी मैटेरियली कुछ हो सकता है। मानसिक तैयारी की बहुत जरूरत है क्योंकि अभी तो माइंड से हम गरीब हैं, हमारा दिमाग गरीब रहने को तत्पर है। बल्कि सच तो यह है कि जो अमीर हैं और जिनसे हम सब मांग रहे हैं, उनको भी हम गाली देते हैं कि भौतिकवादी हैं। बड़े मजे की बात है कि अमेरिका से भीख मांग कर हम जी रहे हैं और उसी को गाली भी दिये जा रहे हैं कि तुम भौतिकवादी हो मैटीरियलिस्ट हो, फलां हो, ढिकां हो। हम आध्यात्मिक हैं। और हमारा आध्यात्म यह है कि हमें भौतिकवादी से भीख मांगना पड़ रही है! तो पहले तो हमारे मन में यह बात साफ हो जाना चाहिए कि समृद्धि लक्ष्य है। एक एक व्यक्ति के मन मस्तिष्क में, आने वाली पीढ़ी के और विद्यार्थियों के मन में समृद्धि का विचार गहराई से डालने की जरूरत है ताकि हजारों साल से पोशा गया दरिद्रता का पागलपन खत्म हो जाये।

दूसरी बात, कोई भी मुल्क तभी समृद्ध हो सकता है जब टेक्नालाजी में वह विकसित हो और हमारा मुल्क टेक्नालाजी में कभी विकसित नहीं रहा बल्कि हम टेक्नालाजी के दुश्मन रहे हैं। अभी पीछे गांधी ने और मुसीबत खड़ी कर दी, वे भी टेक्नालाजी के दुश्मन थे। विनोबाजी भी टेक्नालाजी के दुश्मन हैं। इस मुल्क में टेक्नालाजी के खिलाफ एक हवा रही है कि अगर पैदल चलने से काम चल जाता हो तो कार में चलने की क्या जरूरत? हवाई जहाज की क्या जरूरत? चर्खा से काम चला लो! तकली कात लो! अब अगर तकली और चर्खे ही कातें तो हम कभी समृद्ध नहीं हो सकते हैं। सारे देशों की समृद्धि मूलतः नब्बे प्रतिशत टेक्नालाजी का फल है। जो संपत्ति पैदा होती है उसका नब्बे प्रतिशत टेक्नालाजी का फल है। तो हिन्दुस्तान के माइंड को टेक्नालाजीकल बनाने की जरूरत है। खादी, चर्खे, तकली की बेवकूफी को आग लगा देने की जरूरत है। ग्राम-उद्योग वगैरह की बकवास को बंद कर देने की जरूरत है। विकेन्द्रीकरण की बात घातक है। उद्योग केन्द्रित होना चाहिए। जितनी डीसेन्ट्रेलाइज्ड होगी एकानामी उतनी ही गरीब होगी।

●●●

छोटी छोटी बातें : छोटे छोटे कदम

(लोनावाला साधना शिविर में दिया गया एक प्रवचन)

संकलन : श्री कस्तूरलाल गांधी, बम्बई ।

मेरे मन में इधर बहुत दिनों से एक बात निरन्तर ख्याल में आती है और वह यह है कि सारी दुनिया से आने वाले दिनों में सन्यासी के समाप्त हो जाने की संभावना है । सन्यासी आने वाले पचास वर्षों बाद पृथ्वी पर नहीं बच सकेगा । वह संस्था विलीन हो जायेगी । उस संस्था की ईटें तो खिसका दी गयीं हैं और अब उसका मकान भी गिर जायेगा । लेकिन सन्यासी इतनी बहुमूल्य चीज है कि जिस दिन दुनिया से विलीन हो जायेगा उस दिन दुनिया का बहुत अहित हो जायेगा । मेरे देखे सन्यासी तो चला जाना चाहिए पर सन्यास बच जाना चाहिए । और उसके लिए Periodical सन्यास का Periodical renunciation का मेरे मन में ख्याल है । ऐसा कोई आदमी नहीं होना चाहिये जो वर्ष में एकाध महीने के लिए सन्यास न ले । जीवन में तो कोई भी ऐसा आदमी नहीं होना चाहिए जो दो चार बार सन्यासी न हो गया हो । स्थायी सन्यास खतरनाक सिद्ध हुआ है । कोई आदमी पूरे जीवन के लिए सन्यासी हो जाये, उसके दो खतरे है । एक खतरा तो यह है कि वह आदमी जीवन से दूर हट जाता है और परमात्मा के प्रेम की, और आनन्द की जो भी उपलब्धियां हैं वे जीवन के अनुभव में हैं । दूसरी बात यह होती है कि जो आदमी जीवन से हट जाता है उसकी जो शांति, उसका जो आनन्द है वह जीवन में बिखरने से बच जाता है वह उसका साझीदार नहीं हो पाता । तीसरी बात यह है कि लोगों को यह ख्याल पैदा हो जाता है कि गृहस्थ अलग है और सन्यासी अलग है । और गलत काम करने पर हमें यह ख्याल रहता है कि हम तो गृहस्थ हैं, यह तो करना हमारी मजबूरी है । सन्यासी हो जायेंगे तो हम नहीं करेंगे । और धर्म और जीवन के बीच एक फासला पैदा हो जाता है । मेरी दृष्टि में संन्यास जीवन का अंग होना चाहिए । संन्यास जीवन को समझने की व्यवस्था होना चाहिए । जो आदमी थोड़े दिन के लिए सन्यासी नहीं हो जाता उसका जीवन अधूरा और उसकी शिक्षा अधूरी मानना चाहिए । अगर महीने दो महीने कोई व्यक्ति परिपूर्ण सन्यासी का जीवन जीता हो तो उसके जीवन में आनन्द के इतने द्वार खुल जायेंगे जिसकी हमें कल्पना भी नहीं हो सकती । इन दो महीने में वह पूरी तरह सन्यासी रहेगा । इन दो महीने में दुनिया से उसका कोई संबंध नहीं रहेगा । सन्यासी का जो दुनिया से संबंध होता है उतना भी उसका संबंध नहीं होगा । और यह जानकर आपको हैरानी होगी कि जो आदमी पूरे जीवन के लिए सन्यासी हो जाता है वह गृहस्थी के ऊपर निर्भर हो जाता है । इसलिए वह दिखता तो है संसार से दूर लेकिन संसार के पास उसे रहना पड़ता है । लेकिन जो आदमी बारह महीनों में सिर्फ दो महीने के लिए सन्यासी होगा वह किसी के ऊपर निर्भर नहीं होगा । वह अपने ही दस महीने के गृहस्थ जीवन पर निर्भर होगा । वह संसार के ऊपर आश्रित नहीं होगा । इसलिए किसी से भयभीत भी नहीं होगा । वह किसी से संबंधित भी नहीं होगा । अगर एक आदमी पूरे जीवन के लिए सन्यासी होगा तो वह किसी का आश्रित होगा ही । वह बच भी नहीं सकता, और अंतिम परिणाम यह होता हैं कि सन्यासी दिखाई तो पड़ते हैं लेकिन ये हमारे नेता नहीं अनुयायी के भी अनुयायी होते हैं । ये उनके पीछे चलते हैं । सन्यासी आज्ञा देते हैं गृहस्थ को कि तुम ऐसा

करो और वैसा मत करो। लेकिन गृहस्थ उनका मालिक हो जाता है क्योंकि वह उनको रोटी देता है।

सन्यासी गुलाम हो गया है। सन्यासी की गुलामी दूर हो सकती है एक ही रास्ते से कि वह कभी कभी सन्यासी हो। वर्ष में ग्यारह महीने वह गृहस्थ हो और एक महीने सन्यासी तो वह किसी के ऊपर निर्भर नहीं होगा। वह अपनी ग्यारह महीने की कमाई पर निर्भर होगा। फिर उसे किसी से लेना देना नहीं है। वह एक आदमी पूरी फ्रीडम, पूरी स्वतंत्रता का उपयोग कर सकता है बिना किसी के आश्रय के। वह यह एक महीना परिपूर्ण सन्यासी का अनुभव करेगा जो कभी कोई सन्यासी नही कर पाता। तब वह पूरी मुक्ति से जी सकेगा। इस एक महीने वह जिस विधि से जियेगा और जिस आनन्द को जिस शांति को अनुभव करेगा जिस स्वतंत्रता में प्रवेश करेगा उसी को लेकर वापिस लौटेगा गृहस्थ जीवन में। और जिन्दगी के घनेपन में प्रयोग करेगा जो उसने एकांत में सीखा था। और क्या भीड़ में उसका उपयोग कर सकता है क्योंकि एकांत में शिक्षा होती है और भीड़ में परीक्षा। जो भीड़ से बच जाता है वह परीक्षा से बच जाता है। उसकी शिक्षा अधूरी है। जो मैंने अकेले में जाना है अगर उसका मैं भीड़ में उपयोग नहीं कर सकता तो जानना वह गलत है। वह बहुत मूल्य का नहीं है। वहाँ कसौटी है क्योंकि विरोध है, परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं है, वहाँ सब कुछ प्रतिकूल है। वहाँ भी मैं शांत रह सकता हूं या नहीं। वहाँ भी मैंने जो एक महीने सन्यास साधा था, आनन्द पाया था, शेष रह जाता है। क्या मैं घर के भीतर, दुकान पर बैठकर भी सन्यास को पा सकता हूं ? या नहीं। इसका ही बाकी ग्यारह महीने निरीक्षण करना है Observe करना है। वर्षभर बाद उसे फिर महीने भर के लिए लौट आना है ताकि आने वाले वर्ष भर की परीक्षा के लिए वह तैयार हो सके। नयी सीढ़ियां पार कर सके।

एक आदमी बीस साल की उम्र के बाद सत्तर साल तक जिये और पचास वर्षों में पचास महीने के लिए वह सन्यासी हो सके तो इस जगत में ऐसा कोई सत्य नहीं है जिससे वह अपरिचित रह जाये। ऐसी कोई अनुभूति नहीं है जिससे वह अनजाना रह जाये। और यह जो Renunciation होगा Periodical एक अवधि भर के लिए लिया सन्यास होगा। यह उसे जीवन से नहीं तोड़ेगा। हमारा जो सन्यासी है वह जीवन विरोधी हो गया है। पत्नी और बच्चे उससे भयभीत हैं। माँ-बाप इससे भयभीत हैं। क्योंकि वह जीवन को उजाड़ कर चला जायेगा। यह जो कभी कभी सन्यासी होना है इसमें जीवन से भयभीत होने की कोई जरूरत नहीं है। बल्कि जब वह लौटेगा तब उसकी पत्नी पायेगी कि वह और भी प्यारा पति होकर लौटा है। उसकी मां पायेगी कि वह ज्यादा श्रद्धा, ज्यादा प्रेम ज्यादा आदर भरा हुआ बेटा होकर लौटा है। और यह इस एक महीने बाद ग्यारह महीने यह घर में जियेगा तो जो सुगंध उसने पायी है वह बिखरेगी उससे और प्रेमपूर्ण दुनिया बनेगी। अब तक के सन्यासी ने दुनिया को उजाड़ा है, बिगाड़ा है, बनाया नहीं है। जीवन को निर्मित करने में, सृजन करने में वह सहयोगी और मित्र नहीं रहा है। मेरे मन में एक अवधि के लिए लिया सन्यास अनिवार्य है। अबतक जैसे सन्यासी हुए हैं वे दुनिया से समाप्त हो जायें तो कोई डर नहीं है, सन्यास बचा रहना चाहिए। पुराना सन्यासी Diffused हो जायेगा बड़े पैमाने पर तो हर आदमी को हक हो जायेगा सन्यासी होने का। अभी हर आदमी को सन्यासी होने का हक नहीं हो सका क्योंकि अगर हर आदमी सन्यासी हो जाये तो जीवन एक मरघट बन जायेगा मृत्यु बन जायेगा। जो काम हर आदमी न कर सकता हो उस काम में निश्चित ही कोई भूल है। जो काम हर आदमी का अधिकार न बन सकता हो उसमें जरूर कोई भूल है। अगर सारे लोग सन्यासी हो जायें तो जीवन आज उजड़ जाये इसी क्षण। तो जो सन्यासी है उनको भी वापिस लौट आना पड़ेगा जीवन में। आजीवन सन्यास भ्रांत है, गलत है। और सन्यास बच सके दुनिया में इसके लिए बड़ा प्रयोग करना जरूरी है।

आपने कहा कि आपको मेरी बात समझ में तो आती, बुद्धि तक तो पहुंचती लेकिन उससे व्यक्तित्व परि-

वर्तित नहीं होता। ठीक कहते हैं आप क्योंकि व्यक्तित्व की बनावट वर्षों की बनावट है, पूरे जीवन की बनावट है और जो जानते हैं वे कहते हैं अनेक जन्मों की बनावट है। आप जो मेरी बात सुनते हैं वह जो एक छोटा सा कोना बुद्धि का है वहाँ सुनाई पड़ता है, बुद्धि को ठीक भी मालूम पड़ता है। लेकिन व्यक्तित्व बुद्धि से बहुत बड़ी बात है। बुद्धि व्यक्तित्व का छोटा सा अंश मात्र है। पूरी Personality, intellect से बहुत बड़ी बात है। बुद्धि तो द्वार की भांति है। जैसे एक महल है उसमें एक दरवाजा है। लेकिन महल दरवाजा नहीं है, दरवाजा महल नहीं है। दरवाजे का कुल काम है महल में किसी को प्रवेश दे देना। इससे ज्यादा उसका कोई मूल्य नहीं है। बुद्धि तो केवल प्रवेश द्वार है व्यक्तित्व का। व्यक्तित्व बहुत बड़ी चीज है। और बहुत सी चीजों से निर्मित होता है जिनकी आपको कल्पना भी नहीं होती है कि इन चीजों से भी निर्मित होता होगा। आपकी बुद्धि में एक बात पहुंच जाती है। लेकिन पूरा व्यक्तित्व उन चीजों से भी निर्मित है जिसके विरोध में आपकी बुद्धि में बात पहुंच जाती है। और फिर उस व्यक्तित्व में कोई फर्क नहीं होता। वह व्यक्तित्व वैसा ही बना रहता है। और तब आप बेचैनी में पड़ जाते हैं और तब मैं क्या करूँ, क्या न करूँ बड़ी दुविधा में पड़ जाता हूं। हाँ अगर आप संभव हो सके तो दो-तीन महीने मेरे पास रहें तभी आप के समग्र व्यक्तित्व में कहाँ कहाँ, क्या क्या परिवर्तन किया जाना चाहिए उसके लिए मैं सुझाव दे सकता हूं। मेरे साथ रहकर उनपर आप प्रयोग कर सकते हैं। व्यक्तित्व कह कहां बदल दिया जाये आपके ख्याल में आ जा सकता है। आपको पता नहीं कितनी अजीब सी चीजों से व्यक्तित्व जुड़ा रहता है जिसका हमें पता भी नहीं होता।

डा० सर हरीसींग गौर का नाम आपने सुना होगा। उन्होंने सागर विश्वविद्यालय का निर्माण किया था। यह हिन्दुस्थान के संभवतः अपने जमाने के बड़े से बड़े वकीलों में से थे। प्रिवीकौन्सिल में वकालत करते थे। उनसे मैं कुछ बात कर रहा था और पूरे व्यक्तित्व की बात उनसे मैंने कही तो उन्होंने कहा कि मुझे अपना एक अनुभव ख्याल आता है। मुझे हमेशा से एक आदत थी जिसका मुझे कोई पता नहीं रह गया था। जब भी मैं पैरवी करता था, Argue करता था अदालत में तब कोई गांठ आ जाती, कोई उलझन आ जाती मेरी बुद्धि काम नहीं करती तो मैं अपने कोट के बटन घुमाने लगता था। इसका मुझे पता ही न था। यह Unconscious habit का हिस्सा हो गई थी। जैसे ही मैं कोट के बटन घुमाता था मुझे रास्ता मिल जाता था। जैसे कोई आदमी शरीर के किसी अंग को खुजलाता है, कोई आदमी और कुछ करता है वैसे ही वे बटन घुमाते थे। एक बार किसी स्टेट के एक बड़े मामले में वे वकील थे। उनका विरोधी वकील यह बात निरन्तर देखता रहा था कि जब भी कुछ आरग्युमेंट (Argument) करने में उन्हें कठिनाई होती, वे बटन घुमाते थे। उसने उनके ड्रायवर को मिला कर उनके कोट का वह बटन निकलवा दिया था। वे अदालत में पहुंचे कोट पहिन कर जब Argument कर रहे थे तब एक उलझन आयी, उनका हाथ बटन पर गया पर बटन वहाँ नहीं था और तब एकदम उनकी सारी बुद्धि ने काम करना बंद कर दिया था। और यह उनका पहला मौका था जब वह मुकदमा हार गये थे। वह मुझ से बोले कि बटन के पीछे मैं हार गया था। लेकिन उस वक्त मुझे कुछ समझ नहीं पड़ा कि बटन ही मेरे लिए सब कुछ हो गयी थी। एक Association एक संबंध, एक गहरी Conditioning हो गयी थी दिमाग की, कि जब बटन घूमती तो मस्तिष्क काम करता, बटन नहीं घूमती तो मस्तिष्क काम नहीं करता।

अब बटन जैसी छोटी सी चीज से मस्तिष्क के चलने का इतना अनिवार्य संबंध हो सकता है जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। बटन जैसी छोटी चीजों से भी किसी का सारा व्यक्तित्व संचालित होता है इसका हमें पता भी नहीं है। इसलिए पूरे व्यक्तित्व की बदलाहट के लिए बहुत सी बातें जानना जरूरी हैं जिनकी हमें कल्पना भी नहीं हो सकती कि ये बातें भी इतनी जरूरी हैं। अब एक आदमी शांत होना चाहता है और चुस्त कपड़े पहने हुए है। उसे कल्पना भी नहीं हो सकती कि

चुस्त कपड़े और मन के शांत होने में विरोध है। यह दिखाई भी नहीं पड़ता, अन्यथा हम मिलीटरी में चुस्त कपड़े पहिनना बंद करवा देते। मिलीटरी में चुस्त कपड़ा पहिनना अत्यंत जरूरी है। चुस्त कपड़ा लड़ने की वृत्ति में सहयोगी है ढीला कपड़ा लड़ने की वृत्ति में सहयोगी नहीं है। जो कौमें ढीले कपड़े पहिनती हैं वे लड़ाकू नहीं रह जातीं। अब कपड़े जैसे फिजूल की चीजों से भी किसी के व्यक्तित्व के भीतर लड़ने, अशांत होने, शांत होने का संबंध हो सकता है। और यह एकदम ख्याल में भी नहीं आता। आपको पता नहीं यदि आप चुस्त कपड़े पहिने हैं और सीढ़ियाँ चढ़ रहे हैं तो दो दो सीढ़ियां एक साथ चढ़ जायेंगे और ढीले कपड़े पहिने हैं तो एक ही एक सीढ़ी चढ़ पायेंगे, दो सीढ़ियाँ एक साथ चढ़ ही न सकेंगे। नौकरों को चुस्त कपड़े जानकर पहिनाये जाते हैं ताकि वे तेजी से काम कर सकें। मालिक ढीले कपड़े पहिनते रहे हैं क्योंकि उनको काम करने का कोई सवाल ही नहीं है। सारी दुनिया में सन्यासियों ने ढीले कपड़े चुन लिये थे, इसका भी कोई कारण है कि उन्हें कोई काम नहीं करना था। जिन्हें कोई काम करना है उन्हें चुस्त कपड़े पहिनने चाहिए। चुस्त कपड़े मन में चुस्ती ले आते हैं, तीव्रता ले आते हैं, गति ले आते हैं। ढीले कपड़े शिथिलता लाते हैं, एक Relaxed mind पैदा करते हैं, भीतर सब Relaxed हो जाता है यह मैं उदाहरण के लिए कह रहा हूं। व्यक्तित्व के बहुत से हिस्से हैं जिससे वह बनता है। आप के जूते से लेकर आपकी टोपी तक, आपके बोलने के शब्दों से लेकर सपनों तक, सब आपके व्यक्तित्व को निर्मित करते हैं। आप मेरी बातें सुनकर सोचें कि बदलाहट हो जायेगी तो आप पागल हैं। ऐसे कहीं बदलाहट होती है? यह तो बदलाहट के लिए इशारा हुआ। अगर यह इशारा समझ में आता है तो इसका मतलब यह हुआ कि आप अपने पूरे व्यक्तित्व में खोजें कि विरोध में कहाँ, कहां, क्या क्या पड़ा है। और अगर दिखाई पड़ जाये कि विरोध में है तो आप बदल लेंगे। बदलाहट के लिए कुछ बहुत करना नहीं पड़ता। एक दफे दिखाई पड़ना चाहिए, ख्याल में आना चाहिए कि कहाँ बात अटकी है। और इतनी क्षुद्र चीजों में बात अटकी होती है जिसका हमें ख्याल भी नहीं होता। आप सोचते हों कि बहुत बड़ी बड़ी चीजों से बात अटकी है तो आप गलत में हैं। जिन्दगी में बड़ी बड़ी बातें हैं ही नहीं। जिन्दगी में बहुत छोटी बाते हैं और हम बड़ी बातों पर विचार करते रहते हैं और समय गवां देते हैं। जिन्दगी में बहुत छोटी छोटी बातें हैं जिन पर न कोई विचार करता, न फिकर करता न कोई हिसाब लगाता। और उन छोटा छोटी बातों से ही सारा व्यक्तित्व निर्मित होता है।

इन छोटी-छोटी बातो पर प्रयोग करना संभव हो सकता है यदि आप मेरे निकट थोड़े दिन रहें ताकि मैं आपकी छोटी-छोटी बातों को देख सकूं आपको कुछ सुझाव दे सकूं, आपको कुछ फर्क करने के लिए कह सकूं। कह सकूं आपसे इसे करके देखें क्या फर्क होता है? कई बार बहुत छोटी चीजें बहुत बड़े परिवर्तन ले आती हैं। जिनकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। जिसका हम कोई संबंध भी नहीं जोड़ पाते कि इतनी छोटी बात का इतना बड़ा सबंध हो सकता है। लेकिन व्यक्तित्व बड़ी जटिल, बड़ी Complex बात है। बुद्धि अधूरी है, बुद्धि द्वार है, बुद्धि से शुरुआत होती है अंत नहीं होता। मेरी बातें सुनकर प्रारम्भ हो सकता है अंत नहीं। वे आपके लिए आमंत्रण हो सकती हैं, समाधान नहीं। समाधान के लिए तो उचित है कुछ समय मेरे पास रहें। और फिर आप कोई केन्द्र बनाते हैं तो कई महत्वपूर्ण काम और भी किये जा सकते हैं। जैसे देश भर में जितने मेरे मित्र हैं सभी कहते हैं कि उनके बच्चों के लिए मैं कुछ करूँ। उनके बच्चों के लिए कुछ विचार करना जरूरी है। अगर कभी भी कोई केन्द्र बनता है तो महीने दो महीने के लिए अलग केम्प रखे जा सकते हैं। दो महीने की छुट्टियों में मेरे सारे मित्रों के बच्चे आकर मेरे पास रहें। उनके साथ मैं थोड़ी मेहनत करूँ क्योंकि असली मेहनत उनके साथ है। आपके साथ उतनी असली मेहनत नहीं हो सकती। और अगर आपको मेरी बात समझ में आती है तो आप अपनी कम फिकर करिये, अपने बच्चों की ज्यादा फिकर करिये। उनके साथ बहुत आसानी से जो हो सकता है वह आपके साथ बहुत कठिनाई से हो सकेगा। क्योंकि

आपका जाल करीब करीब खड़ा हो गया है और उस जाल के साथ आपका मोह भी बँध गया है। बच्चों के साथ कोई जाल नहीं है। अगर आपमें हिम्मत हो तो बच्चों को क्रांति की दिशा में संलग्न करे जहां सभी इकट्ठे होकर मेरे पास प्रयोग कर सकें। आज नहीं कल यह भी हो सकता है कि वहाँ एक विद्यापीठ हो, एक छात्रावास हो जहाँ वे पढ़ें और रहें। उनके पूरे जीवन पर प्रयोग किया जा सके। यह भी हो सकता है बड़े बड़े होस्टल हों जहां बच्चे रहें और पढ़ें चाहें कहीं भी। पढ़ने से उस संस्था का कोई संबंध न हो। लेकिन उनके जीवन चर्या पर, वे कैसे रहें, कैसे उठें, क्या करें उसके लिए प्रयोग किये जा सकें।

तीसरी बात मुझे पूरे मुल्क में जगह जगह सैकड़ों लोगों ने यह बात कही है कि अगर प्रत्येक रात्रि ध्यान का पूरा प्रयोग रेडियो से Relay प्रसारित किया जाये तो लड़के लोग अपना रेडियो खोलकर अपने घर पर प्रयोग कर सकते हैं। आज नहीं कल आपके पास कोई बड़ा केन्द्र हो तो पूरा ट्रांसमिशन सेन्टर आपके पास हो सकता है।

मेरे पास स्थायी रूप से रहने और प्रयोग करने के लिए ढेरों पत्र आते हैं पर मैं कहां व्यवस्था करूँ। अभी तीन दिन पहले एक वृद्ध जन का पत्र आया था कि मेरी सत्तर वर्ष की उम्र है और मेरे जीवन के अब जो दो चार बरस बचे हैं उन्हें मैं खोना नहीं चाहता और जबसे आपकी बात सुनी है तब से मैं मुश्किल में पड़ गया हूं। जो मैं करता था वह फिजूल हो गया है और अब मृत्यु इतनी करीब है कि मैं चाहता हूं कि आपके निकट रहूं और जो करने जैसा है वह मैं करूँ। मैं अपना खर्च उठा लूंगा, सब कर लूंगा। लेकिन मेरे पास तो कोई व्यवस्था नहीं है। व्यवस्था बन जाये तो हम एक उम्र की सीमा बांध सकते हैं जैसे पचपन साठ के बाद वहां स्थायी रूप से सन्यास लेकर रह सकें और उसके पहले अल्पकालिक Periodical सन्यास के लिए वहां आ सकें। बहुत से लोग उत्सुक हैं। मुझे वह ठीक लगता है। मेरे बहुत से मित्र सोचने लगे हैं कि पचास-पचपन तक काम किया, सब व्यवस्था कर ली, अब हम चाहते हैं आपके पास रहें। मेरे एक मित्र हैं उन्होंने मेरी यह बात सुनी, उनकी उम्र पचास वर्ष थी, उन्होंने कहा बस इस वर्ष मेरी वर्षगांठ आती है और मैं अपना सारा काम सामाप्त कर दूंगा! बहुत हो गया, कमा लिया बहुत, रखने लायक, अब मेरे लिए कोई जरूरत भी नहीं, अब मैं किस लिए कमाने जाऊँ ठीक वर्षगांठ पर सब बंद करवा दिया, दुकानें बंद करवा दीं, हिसाब बंद करवा दिया। अपनी पत्नी को कहा कि अब हमारे पास इतना है कि हम दोनों अगर सौ बरस भी जियें तो भी बच जायेगा। अब हम करेंगे क्या? वह मुझे बार बार लिखते हैं कि मैंने सब बंद कर दिया है। अब मैं चाहता हूं आपके पास आ जाऊं। अब मैं क्या करूँ मेरे पास कोई व्यवस्था नहीं है। मैं फिर यहां वहां घूमता फिरता भी हूं। मैं किसको किसके लिए कहूं। उचित यही कुछ इस तरह की व्यवस्था बने जहां कुछ लोग स्थायी रूप से आकर रहना चाहें तो रह सकें और बार बार आकर रहना चाहे तो भी रह सकें।

थाईलैण्ड, बर्मा और जापान तीनों देशों में Periodical Renunciation अल्पकालिक सन्यास की व्यवस्था है। प्रधान मंत्री से लेकर नीचे तक का आदमी यह सौभाग्य पा जाता है। जीवन में कभी न कभी सन्यासी हो जाता है। हम भी भागते हैं, कभी कोई महीने भर के लिए मसूरी जाता है कोई लोनावाला आता है लेकिन क्या फर्क पड़ता है? उस भागने से कोई भी फर्क नहीं पड़ता सिर्फ स्थान बदल जाता है थोड़ी आबोहवा बदल जाती है लेकिन मस्तिष्क नहीं बदलता। इसलिए हमें इसके संबंध में कुछ व्यवस्था करना चाहिए, और बच्चों के संबंध में कुछ कर सकूं इसकी फिकर करनी चाहिए। अभी जो शिविर होते हैं वह तीन दिन के लिए ही होते हैं और वहां बहुत विस्तार से पूरे जीवन के सभी पहलुओं को छू पाऊं यह संभव नहीं हो पाता। एक स्थायी केन्द्र हो तो बिशिष्ट विषयों पर अलग अलग शिविरों का आयोजन कर सकते हैं। मेरी दृष्टि सभी विषयों के प्रति है। मुझे ऐसा नहीं मालूम पड़ता कि भगवान

के संबंध में बात करना ही जरूरी है। मुझे मालूम पड़ता है सैक्स Sex के संबंध में भी बात करना उतना ही जरूरी है। मुझे ऐसा नहीं मालूम पड़ता कि ध्यान के संबंध में बात करना जरूरी है। ऐसा भी मालूम पड़ता है कि प्रेम के संबंध में भी बात करना उतना ही जरूरी है। मुझे यह नहीं मालूम पड़ता कि योग के संबंध में बात करना जरूरी है। भोग के संबंध में भी उतनी ही बात करना जरूरी है। कितने ही मित्रों ने मुझे पत्र लिखे हैं कि एक दम्पत्तियों का शिविर हो जिसमें पति पत्नि सम्मिलित हों, या एक पारिवारिक शिविर हो जिसमें कोई भी व्यक्ति पूरा परिवार लेकर सम्मिलित हो जहां मैं पूरे परिवार के संबंध में, पूरे परिवार के सोचने विचारने के ढंग के संबंध में, पूरे परिवार के अन्तर-संबंधों के संबंध में, घर के संबंध में पूरे विचार रख सकूं कि वे घर में कैसे जियें, परिवार में क्या हो, क्या न हो। अभी तो परिवार में सब गलत हो रहा है। वह इतना कुरूप हो गया है जिसका कोई हिसाब नहीं। मकान अच्छे बनते जा रहे हैं और परिवार कुरूप से कुरूप Ugly से Ugly बनते जा रहे हैं। एकदम सड़ गया है परिवार। उसमें कोई प्रेम नहीं, कोई आदर नहीं कोई सुखद अन्तर-संबंध नहीं। इधर गहरी ऊब पर सारा जीवन चल रहा है और उधर हम शान्ति की तलाश करेंगे। अगर परिवार हमारा नहीं बदलता तो शान्ति नहीं मिल सकती। इसलिए पूरे परिवार के अन्तर जीवन में क्रांति हो सकती है इसके लिए अलग शिविर हों। विवाह प्रेम, सैक्स इनके संबंध में अलग शिविर हों। आज युवा पीढ़ी के लिए यही सबसे बड़ा प्रश्न खड़ा हो गया है और इसका कोई हल नहीं निकलेगा तो पूरा समाज डूब जायेगा। भोग की निन्दा करने का कोई अर्थ नहीं है. भोग भी जीवन का अनिवार्य हिस्सा है। और जो सम्यक रूप से भोगने में समर्थ हो जाता है वह योग को उपलब्ध हो जाता है। योग और भोग में विरोध नहीं है। जो विरोध आज तक रखा गया है उससे नुकसान ही हुआ है, फायदा नहीं। एक सामान्य भोग का जीवन कैसे योग में प्रविष्ट हो सकता है, इन दोनों के बीच क्या सेतु हो सकता है, इन दोनों को जोड़ने वाला क्या मार्ग हो सकता है उस पर सोचना, काम करना जरूरी है। जीवन के सारे प्रश्नों पर समाज की व्यवस्था पर, अर्थ की व्यवस्था पर, सब तरफ विचार करना जरूरी है। आपको ख्याल नहीं जिनपर आप विचार नहीं कर रहे वे सब आज नहीं कल मसले की तरह खड़े हो जायेंगे। आज नहीं कल मुल्क के सामने कम्यूनिज्म Communism का सवाल हो। उससे आप बच नहीं सकेंगे, उससे आप भाग नहीं सकेंगे और अपने कुछ सोचा नहीं तो कम्यूनिज्म एक हत्यारे की तरह पूरे मुल्क पर छा जायेगा, एक खूनी क्रांति की तरह छा जायेगा। और हमने सोचा, विचारा, मुल्क की बुद्धि को तैयार किया तो कम्यूनिज्म Communism एक अत्यंत शान्तिपूर्ण ढग से मुल्क में आ सकता है। लेकिन धार्मिक आदमी इनपर विचार ही नहीं करता। मेरी दृष्टि में पूरा जीवन ही विचारणीय है। आज नहीं कल अर्थ के सवाल खड़े होंगे। सारे मुल्क की सब नीति सड़ गई है। उसमें हम सब पिसे जा रहे हैं। सब गाली दे रहे हैं और कोई हल, कोई रास्ता नहीं मिल रहा है। अन्धों की तरह खड़े हैं, और बरदास्त कर रहे हैं। जो हो रहा है वह देख रहे हैं। वह ऐसा हो है जैसे मकान करीब करीब जल गया हो और हम बाहर खड़े खड़े निंदा कर रहे हों कि किसने आग लगा दी? और यह क्या हो गया? यह अब कैसे बुझेगी। मकान जलता जा रहा है और हम सब खड़े विचार कर रहे हैं कि मकान जल रहा है। सौ पचास साल बाद हमारे बच्चे हमें लानत देंगे कि ये कैसे लोग थे कि पूरा मुल्क जलता रहा, बेवकूफियाँ बढ़ती रहीं और सब बैठकर देखते रहे, चर्चा करते रहे, और कुछ भी नहीं किया। राजनीति पर भी विचार करना जरूरी है कि मुल्क की राजनीति कैसी हो? मुल्क का धर्म कैसा हो? मुल्क की समाज व्यवस्था कैसी हो? मुल्क की आर्थिक व्यवस्था कैसी हो? इन सब पर ही मुल्क में जगह जगह मुझसे पूछते हैं। अभी माथेरान में ही मुझसे पूछा गया जिसका मैंने उत्तर नहीं दिया क्योंकि उत्तर देने के लिए पूरा कैम्प ही चाहिए। एक मित्र ने पूछा था कि क्या मैं अपनी सारी शक्ति थोड़े से लोगों को शान्त होने की दिशा में ही लगा दूगाँ? क्या बृहत्तर समाज के लिए मेरी शक्तियां काम में नहीं लाऊँगा? जिससे इस मुल्क का पूरा जीवन प्रभावित हो सके इस दिशा में आप कुछ न करेंगे? उनका पूछना ठीक है। मेरे

मन में भी है कि कुछ किया जाना चाहिए। कुछ नहीं करो का मतलब है कि फिर जो हो रहा है उससे मैं सहमत हूं, नहीं करने का मतलब नहीं करना नहीं होता। नहीं करने वाला भी किसी न किसी रूप में सहमत है। अगर एक आदमी किसी की हत्या कर रहा है और मैं कहता हूं कि मुझे कुछ भी नहीं करना तो भी मैं हत्यारे के साथ हूं। क्योंकि मैं हत्या देख रहा हूं खड़े होकर। मैं रोक सकता था और नहीं रोक रहा हूं तो मैं उसमें सहयोगी हो रहा हूं। यह मत सोचिये कि कोई आदमी राजनीति में भाग नहीं ले रहा। आपके साधु सन्यासी राजनीति में भाग नहीं ले रहे, आपके साधु राजनीति में उत्सुक नहीं है तो यह मत सोचिये कि वे राजनीति में भागीदार नहीं है। वे राजनीति में भागीदार हैं क्योंकि जो चल रहा है फिर उसमें उनकी सहमति है, क्योंकि फिर जो हो रहा है उसमें उनका कोई विरोध नहीं है। जिन्दगी में जो भी जी रहा है वह जिन्दगी की हर चीज में भागीदार है। वह कहीं भाग नहीं सकता। भागता है तो भी भागीदार है क्योंकि वह यह कहता है कि मैं कुछ भी करना नहीं चाहता इस संबंध में। इसका मतलब है जो कुछ हो रहा है उसमें सहमति दे रहा है।

जीवन के सभी पहलुओं को छूने की अत्यंत जरूरत है क्योंकि सारा जीवन अन्तर संबंधित Inter-related है। सब एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। मुल्क की राजनीति अगर गलत है तो मुल्क की शिक्षा ठीक नहीं हो सकती। मुल्क की शिक्षा ठीक नहीं होती तो मुल्क का धर्म ठीक नहीं हो सकता। मुल्क का धर्म ठीक नहीं होता तो शिक्षा ठीक नहीं होगी। शिक्षा ठीक नहीं होगी तो राजनीति ठीक नहीं हो सकती। सब जुड़ा हुआ है और इस सारे जुड़े हुए के लिए एक सम्यक दृष्टि, एक जीवन व्यवहार, एक जीवन चर्या विकसित करने के लिए जरूरी होगा कि एकांत में अधिक दिनों तक, अधिक मसलों पर Conference बुलायी जा सके, सेमिनार Seminar बुलाई जा सके, शिविर बुलाये जा सकें जहां हम शांति से रह सकें। अभी शिविरों में हम किसी होटल में ठहर जाते हैं। होटल होटल हैं, होटल का कोई Psychological atmosphere नहीं होता, मानसिक वातावरण नहीं होता। यहाँ आकर ठहरने से खाने, पीने, रहने का काम हो जाता है। लेकिन अगर हम कोई स्थल बनाते हैं तो हमारी दृष्टि है कि उसमें पूरा मनोवैज्ञानिक वातावरण निर्मित करेंगे। वहां के वृक्षों को भी आपसे कुछ कहना चाहिए। वहां के मकानों को भी आपसे कुछ कहना चाहिए। वहां के रास्ते भी आपको कुछ सुझाव दें, वहां की हवा भी आपको कुछ कहे, वहां जो लोग रहें उनकी मौजूदगी भी आपसे कुछ कहे। वहां एक पूरा Psychological atmosphere मनोवैज्ञानिक वातावरण होना चाहिए। उस स्थान में प्रविष्ट होते ही आदमी को लगे कि स्थान ही नहीं बदला, मेरे मन की धारणायें और तरंगें भी बदल गयीं है। यह सब वहां किया जा सकता है। छोटी छोटी चीजों से सारा फर्क पड़ता है। हिटलर हुकूमत में आया तो उसने इन्कार करवा दिया कि किसी भी बच्चे को गुड़ियों से न खेलने दिया जाये, गुड्डा गुड्डी के शादी विवाह न रचने दिये जायें। बच्चों के सारे खिलौने बदल दिये जायें। तोप, बन्दूक तलवार ये खिलौने होंगे। छोटा बच्चा पहले दिन झूले पर आयेगा तो उसके ऊपर घुनघुना नहीं लटका होगा उसके स्थान पर तोप लटकी होगी। वह पहले दिन भी देखे तो तोप देखे। उसके Mind पर पहला Impression प्रभाव तोप का हो। हिटलर ने कहा गुड्डा-गुड्डी नहीं चलेंगे। ये बच्चों को कमजोर बनाते हैं ये Impotent नपुंसक बनाते हैं। ये बच्चों को बलवान नहीं करते, युद्ध के लिए तैयार नहीं करते। युद्ध के लिए बच्चों को तैयार करना है तो पहले दिन ही उन्हें तोप मिल जानी चाहिए।

अभी आपको ख्याल नहीं है कि बच्चों के सारे खिलौने लाल रंग से रंगे होते हैं जो बिल्कुल गलत है। लाल रंग से रंगे हुए खिलौने जो बच्चे खेलेंगे वे अशांत होंगे लाल रंग मन में अशांति पैदा करने का बड़ा मूलभूत कारण है। आप हरे दरख्तों, वृक्षों को देखकर खुश हो जाते हैं, क्यों ? हरे वृक्षों में क्या है सिवाय हरे रंग के ? जंगल में जाकर आप खुश होते हैं आपको शांति मालूम पड़ती है,

कारण सिर्फ हरा रंग है और कुछ भी नहीं। सिर्फ हरे रंग का विस्तार आंख के स्नायुओं को शिथिल कर देता है, शांत कर देता है। लाल रंग स्नायुओं को खींच देता है। अगर लाल को बहुत देर तक देखते रहें तो आप क्रोध से भर जायेंगे। यहां इस कमरे में यदि सब लोग लाल कपड़े पहिनकर बैठें तो थोड़ी ही देर में आप इस कमरे में घबरा जायेंगे, आपको Suffocation घुटन मालूम होगी। आपको लगेगा यहां बड़ी गड़बड़ है यहां से हट जाना चाहिए। यह Soothing सुखद नहीं है। यदि बच्चों को भविष्य में शांति की दुनिया में जाना है तो उनके खिलौने लाल रंग से नहीं, हरे रंग से रंगे हुए होना चाहिए। नहीं तो वे अशांति में जायेंगे। मेरा कहना है जीवन इतनी छोटी-छोटी चीजों से संयुक्त है, जुड़ा हुआ है और उन सब पर विचार चिंतन करने के लिए जो केन्द्र बने वह वैज्ञानिक दृष्टि से बने। वहां के रंग, वहां के मकान, वहां के पौधे, वहां के फूल, वहां की सड़कें, वहां की हवा सब वैज्ञानिक ढंग पर नियोजित हो। एक आदमी वहां प्रविष्ट हो तो सब तरह से उसके भीतर परिवर्तन हो सके इसकी सारी व्यवस्था हमें जुटा देना है। वह कोई साधारण आश्रम होने वाला नहीं है, वह तो एक पूरी वैज्ञानिक प्रयोगशाला होगी। वह पूरी वैज्ञानिक प्रयोगशाला हो तभी हम आदमी को पूरा बदल सकेंगे थोड़े दिनों में। और बदला हुआ आदमी जो सीखकर जायेगा, लेकर जायेगा उससे अपने घर में परिवर्तन करने की कोशिश करेगा। यह मेरे मन के अनुकूल है और अब आप सोचें उस दिशा में, कुछ करें उस दिशा में, मैं भी श्रम करने को राजी हूं। वहां सब सरलता से हो सकता है यदि सारी व्यवस्था जुटा दी जाये। और फिर आप जैसा कहते हैं कि मेरा व्यक्तित्व नहीं बदला तो आपका व्यक्तित्व भी इतना बदल दिया जा सकता है कि आप स्वयं कहने लगें कि और मत बदलिये, अब मुझे घर जाने दीजिये। इसमें जरा भी कठिनाई नहीं है। आदमी का व्यक्तित्व बनाया हमने है तो बदल भी सकते हैं। आदमी का व्यक्तित्व बदलना कोई कठिन बात नहीं है, जरा भी कठिन नहीं है। क्योंकि व्यक्तित्व बदलने की तो साफ साइन्स है। बनाने की साइन्स है, हमने बनाया है एक खास ढंग से। उसमें जहां जहां ईंटें हमने रखी हैं उन्हें खिसका देना है और व्यक्ति उल्टा हो जायेगा, बिल्कुल दूसरा हो जायेगा। तो इस दिशा में सोचें। और भी जो सुझाव आये हैं मित्रों के वे भी महत्वपूर्ण हैं, जैसे साहित्य अधिकतम लोगों तक पहुंच सके इसके लिए कुछ सोचें। और सोचेंगे तो बहुत से मार्ग निकल आयेंगे, बहुत से मित्र मिल जायेंगे जो अपना श्रम अपनी शक्ति दे सकेंगे। मुझे लोग जगह जगह पूछते हैं कि हम क्या करें? हम कुछ करना चाहते हैं? हमारे पास कोई काम नहीं है, आप हमें काम बतायें। आपके पास काम हो तो लोगों की कोई कमी नहीं पड़ेगी बहुत अच्छे अच्छे लोग आते जायेंगे। और रोज अच्छे अच्छे आते जायेंगे। कोई आदमी कुआ खोदता है तो पहले कंकड़-पत्थर हाथ लगते हैं और फिर थोड़ी देर बाद अच्छी जमीन हाथ आती है और फिर पानी के स्रोत आते हैं। हमें अपने को पत्थर-कंकड़ ही मानना चाहिए क्योंकि अभी कुआ खोदना शुरू किया है। हमसे बहुत अच्छे लोग आ जायेंगे, हमसे ज्यादा काम करने वाले, हमसे ज्यादा बुद्धिमान, हमसे ज्यादा लगनशील और हमारी तैयारी होनी चाहिए कि जब भी हमसे ज्यादा लगनशील लोग आयें तो हम अपनी जगह छोड़ दें और उनको कहें कि तुम आ जाओ, तुम हमसे बेहतर काम संभाल सकोगे। यह तो प्रेम पर आधारित मित्रों के समूह का लक्षण होता है कि वे हमेशा जगह छोड़ने को राजी होते हैं। तैयार होते हैं कि कोई बेहतर आदमी आ जाये तो जगह छोड़ दूं। मैं तो तभी तक काम करूंगा जब तक मुझसे बेहतर नहीं आ जाता। बेहतर आये तो मैं तत्काल अलग हो जाऊंगा। इतना बड़ा मुल्क है इतनी ऊर्जा है लोगों के पास इतने बढ़िया लोग हैं कि हम जिस दिन पुकारना शुरू करेंगे उस दिन बहुत लोग आ जायेंगे। अभी हमने पुकारा नहीं है, अभी कोई आवाज नहीं दी है हमने, अभी इस दिशा में मैंने मुल्क को कुछ नहीं कहा। आप तैयार हों तो मैं कहना शुरू करूंगा। और जैसे ही अपील करूंगा तो देश से अनेक लोग आपको मिलेंगे। इससे आप काम खोजें, बाकी काम मेरा है।

धर्म समस्या नहीं, समाधान

संकलन : श्री हरीशचन्द्र, दिल्ली

(आज की शताब्दी का गहरा प्रश्न चिन्ह है : क्या धर्म से जीवन का कोई प्रयोजन है—अथवा जीवन को निष्प्रयोजन ही जी लेना है। इस दिशा में आचार्य श्री को पैनी अभिव्यक्ति धर्म समस्या नहीं समाधान पर यहां प्रस्तुत है। जो एक फरवरी को चांदनी चौक दिल्ली में जैन (श्वेताम्बर) साधु-साध्वियों के मध्य हुई वार्त्ता से है)

मुनि अमर कवि :—इधर धर्म की स्थिति के विषय में आजकल आप क्या विचार करते है ?

आचार्यश्री—धर्म के सम्बन्ध में तो कोई परिवर्तन दिखाई नहीं। धार्मिक समस्या तो सदा वही है। इसलिये समाधान भी बदलता नहीं। धर्म के नाम पर जो जाल खड़े हो जाते हैं वे उलझाव खड़ा कर देते है। राजनैतिक और सामाजिक परिस्थिति तो रोज बदलती रहती हैं। उसके लिये कोई स्थिर समाधान हो भी नहीं सकता। तो धर्म के संबंध में सोचने का सवाल ही नहीं। वही है ही। और कोई अन्तर कभी पड़ता नहीं। लेकिन समाज तो रोज बदल रहा है। हमारी तकलीफ यह है कि हमने जैसे धर्म के सनातन उत्तर स्वीकार किये, वैसे ही हमने समाज के भी सनातन उत्तर स्वीकार कर लिये। इससे हम बड़ी कठिनाई में पड़ गये हैं। यह तो हमें समझना ही पड़ेगा कि समाज तो रोज बदलता है। इसलिये उत्तर स्थायी नहीं हो सकते। रोज नये उत्तर खोजने पड़ेंगे।

पश्चिम में ठीक उल्टी हालत है। जैसे हमने धर्म के पीछे २ समाज को शाश्वत समझ लिया। वैसे उन्होंने समाज के पीछे २ धर्म को अशाश्वत और सामयिक समझ लिया है। वे समझते हैं कि रोज धर्म के सम्बन्ध में भी सोचना पडेगा।

धर्म के सम्बन्ध में तो सोचने का प्रश्न ही नहीं है। लेकिन धर्मों के सम्बंध में बहुत कुछ सोचने जैसा है।

मुनिश्री ऐसा है न आचार्य श्री जी जब धर्म व्याख्या का रूप लेगा और जब कभी हम उसे शब्द का माध्यम दे देंगे तब तो प्रश्न खड़ा हो जायेगा न उसके ऊपर भी कि वह क्या है ? अगर वह अवाच्य है। याने उसकी कोई व्याख्या नहीं उसके लिये हमारे पास कोई शब्द नहीं, अदृश्य है एक। तब तो ऐसा हो सकता है। लेकिन जब भी कोई शब्द का रूप लेगा, तब तो प्रश्न खड़ा हो जायेगा।

आचार्यश्री—हां प्रश्न इसलिये खड़ा हो जायेगा कि शब्द का रूप लेते ही वह धर्म नहीं रह जायेगा। इस लिये प्रश्न खड़ा हो जायेगा। जैसे ही हमने शब्द का रूप दिया कि हमने उसे सामयिक जगत का हिस्सा बना दिया। फिर वह धर्म नहीं रह गया। धर्म तो वह तभी तक है जब तक वह अवाच्य है। निशब्द है। और जैसे ही हमने शब्द

का रूप दिया, हमने व्यभिचार शुरू कर दिया। सबसे बड़ी भूल तो हमने कर ली कि हमने उसे शब्द का रूप दिया।

मुनिश्री—लेकिन मनुष्य करेगा तो सही।

आचार्य श्री—अब यह जो सवाल है, जिन्होंने धर्म को जाना, उन्होंने यह भूल कभी नहीं की और जिन्होंने नहीं जाना वो भूल नहीं करेंगे, यह अपेक्षा ही गलत है। वह तो करते ही रहेंगे।

जो धर्म को जानते हैं वो सब बोलते हैं— धर्म को छोड़ के। और अगर बोलते भी हैं तो यही बोलते हैं कि धर्म क्या नहीं है। वे यह नहीं बोलते कि धर्म क्या है? अगर बोलते भी हैं तो निषेध ही है बोलना। अब जैसे महावीर से कोई कहे कि धर्म क्या है? तो वह यह नहीं कहते कि प्रेम धर्म है। विधेय हो जाये। वह कहेंगे अहिंसा, वे कहते हैं कि हिंसा धर्म नहीं है।

मुनिश्री—मतलब यह हुआ उसका निषेध से चलना पड़ेगा। तब फिर!

आचार्यश्री—हाँ निषेध से ही चलना पड़ेगा, जिसे हमें शब्द में न कहना हो उसे हमें निषेध वाची शब्दों में कहना पड़ेगा। और जब भी धर्म विधेय शब्दों में बंधता है, तभी उपद्रव शुरू हो जाता है। अगर हम निषेध से चलें तो दुनियां में जैन, हिन्दू, मुसलमान के लिये कोई जगह न रह जाये। जिसे हम विधेय बनाते हैं कि जैन, हिन्दु, मुसलमान खड़ा हो जाता है क्योंकि निषेध इतना ही कहता है कि यह नहीं है। तो आपको कुछ होने का मौका नहीं देता। आप फिर यह नहीं कह सकते कि मैं जैन हूं। ज्यादा से ज्यादा आप इतना ही कह सकते हैं कि मैं अधार्मिक नहीं हूं। बस इतना ही आप कह सकते हैं। पर कठिनाई जानने वालों के साथ नहीं है। कठिनाई न जानने वालों के साथ है और वो कठिनाई भी उन न जानने वालों के साथ नहीं है, जिन्हें पता है कि वो नहीं जानते। उन न जानने वालों के साथ है, जिनको यह भ्रम है कि वो जानते हैं। ऐसे न जानने वालों का बड़ा वर्ग है जिसे हम पण्डित कहते हैं।

उसे कुछ भी पता नहीं। उसे अनुभूति की कोई किरण कभी नहीं फूटी। उसने कभी कुछ नहीं जाना। लेकिन उसके पास उधार ज्ञान की वसीयत है जिसे वह दोहरा सकता है। उसके पास शब्द सम्पत्ति के अतिरिक्त कोई सम्पत्ति नहीं। अगर उसे हम कहें कि धर्म शब्द में नहीं तो वह एकदम गरीब हो जाता है। उसके पास कुछ भी नहीं है। वह कहता है कि धर्म है तो शास्त्र में, धर्म है तो शब्द में, धर्म है तो सिद्धांत में। वह जो वर्ग है। वह सदा से ही धर्म की समस्या को व्यर्थ ही खड़ा करता रहा है। अन्यथा धर्म की कोई समस्या ही नहीं। सचाई तो यह है कि धर्म समाधान है उसकी कोई समस्या हो नहीं सकती। बीमारी के लिये दवा होती है। सब समस्याओं का समाधान धर्म है। इसलिये यह बहुत ही असंभव है कि धर्म समस्या बन जाये। और अगर धर्म समस्या बन जाये तो कोई उपाय न रहा। फिर कहां समाधान खोजियेगा, बड़ी कठिनाई हो जायेगी। तो इसलिये चूंकि धर्म समाधान का ही नाम है। धर्म की कोई समस्या तो है नहीं, हां धर्मों की समस्या अवश्य है। जैनियों की समस्या है, श्वेताम्बरों की समस्या है दिगम्बरों की समस्या है। इन सबकी समस्या है, और इनकी समस्या भी आज से नहीं सदा से है। वह भी सामायिक नहीं है। वह भी सनातन है। सदा से है। और जिस व्यक्ति को इस समस्या से मुक्त होना हो उसे सुलझाने का उपाय नहीं। उसे सिर्फ बाहर हो जाने का उपाय है। कुछ समस्याएँ ऐसी होती हैं जिन्हें आप सुलझायें। कुछ समस्याएं ऐसी होती हैं, जिनसे सिर्फ आप बाहर हो जायें। इसके सिवाय उनके सुलझाने का कोई उपाय नहीं।

मैं समझता हूं जिसको धार्मिक होना है उसे बहुत गहरे में सम्प्रदाय से बाहर हो जाना चाहिये। तो उसके लिये मामला खतम हो गया। एक आदमी सोया हुआ है और सपने में बहुत उलझ गया है। सुलझाव का कोई

उपाय नहीं, सिवाय इसके कि वह जाग जाये। तो मैं मानता हूं कि धार्मिक समस्या को हम सुलझा न सकेंगे। लेकिन एक २ व्यक्ति सुलझा ले सकता है। वो यूँ कि वो चुप-चाप बाहर हो जाये। और जिस समस्या के कुछ लोग बाहर हो जायें और हम देखे कि उनके जीवन में आनन्द की एक किरण आया है। एक शान्ति आयी है एक आत्मा का प्रकाश आया है। तो वो जो दूसरे समस्या में उलझे हैं उनके भी बाहर आने की संभावना बनती है लेकिन अभी हम क्या कर रहे हैं। जो उलझे हैं वो भी भीतर हैं और जो सुलझाने की कोशिश कर रहे है वो और भी भीतर जाकर खड़े हैं। क्योंकि वो कहते हैं कि हम सुलझायेंगे। सुलझाने के लिये भी उनको वहां जाना पड़ता है।

बुद्ध के जीवन में एक बहुत अद्भुत घटना है। वो एक जंगल में एक पहाड़ से गुजर रहे हैं। और उन्हें प्यास लग गयी है। उन्होंने आनन्द को कहा कि तू पानी ले आ। वो गया पीछे एक झरने पर उस झरने में से बैलगाड़ी निकल गई है। झरने का पानी सब गन्दा हो गया है। आनन्द ने सोचा इस गदे पानी को पहले साफ कर लूँ। तो वो अंदर उतर गया है। उसे साफ करने लगा है। उसने जितना साफ किया है, पानी और गंदा हो गया है क्योंकि वो किसी के उतरने से गंदा हुआ था। अब वो और परेशान हो गया और लौट के उसने बुद्ध से कहा पानी पीने योग्य न रहा उसमें से बैलगाड़ियां निकल गई थीं।

बैल गाड़ियां उतर गईं थीं तो तू किनारे बैठ जाता तो पानी पीने योग्य हो जाता। तू तो वहीं उतर गया था उसने कहा मैं सुधारने को उतर गया था।

वो जिसको हम सुधारक कहते हैं न, वह बड़ा उपद्रव खड़ा कर देता है। उसको भी खड़ा वहीं होना पड़ता है जहां उपद्रवी खड़े हैं। और उन्हीं के बीच में वो सुलझाने जाता है। उसे पता नहीं कि उलझाव के अपने कीटाणु हैं कि आप सुलझाने गये तो आपको भी पकड़ लेंगे। और बिना पकड़ाये आप जा न सकेंगे। मुझे तो ऐसा लगता है कि जिन लोगों को अब धर्म में रूचि है उन्हें सम्प्रदाय के एकदम बाहर हो जाना चाहिये।

उन्हें अब कह देना चाहिये कि हमें धार्मिक होना पर्याप्त है जैन होने की इच्छा नहीं रखते अब हम। मुसलमान होने की इच्छा नहीं रखते। हिन्दू होने की इच्छा नहीं रखते। भविष्य के लिये, आने वाले सौ पचास वर्षों में ऐसे थोड़े लोग ही धर्म के वाहक बन सकेंगे। क्योंकि वह जो पुराना सिलसिला था वह इतना उलझ गया है कि नई पीढ़ियाँ उसे सुलझाने में भी उत्सुक नहीं हैं। एक आदमी ने एक किताब लिखी है। उसने उसमें लिखा कि मैं एक आदमी को मिला। उससे मैंने कहा कि ईश्वर के सम्बन्ध में आपका क्या ख्याल है। उसने कहा जो भी हो मैं उसके लिसे राजी हूं, मैं झंझट में नहीं पड़ता। उस आदमी ने लिखा है कि मैं सोचता था कि नास्तिक ईश्वर का वरोधी है। मुझे पहली दफे पता चला कि नास्तिक से भी खतरनाक एक आदमी है जो कहता है जो भी हो मुझे मन्जूर है।

नई पीढ़ी जो है वह आपके उलझाव के जाल को देख के ऐसी घबड़ा गई है कि वह सुलझाने को भी उत्सुक नहीं। वह कहती है आप जानो आपका काम जाने और इसका दुष्परिणाम यह होने की संभावना है कि कहीं सम्प्रदाय के फिकने के साथ २ धर्म न फिक जाये, जिसका पूरा डर है। तो इसलिये अब इस समय जिनको धर्म की जरा भी ज्योति बचाये रखनी है, उन्हें एक नितान्त गैर साम्प्रदायिक होने की हिम्मत जुटानी पड़ेगी। बड़ी हिम्मत है। क्योंकि सम्प्रदाय सुरक्षा देता है, व्यवस्था देता है, आदर देता है सब देता है। लेकिन उसके साथ बिमारियाँ भी देता है। समस्याएं भी देता है।

अगर उसकी समस्याओं के बाहर होना है तो उसकी सुविधाओं के भी बाहर होने की झंझट खड़ी हो गई है। और जो उसकी सुविधाओं के बाहर नहीं हो सकते, वो जाने अनजाने उसकी समस्याओं को सुलझाने में कारण भूत भी नहीं बन सकते।

मुनिश्री—किन्तु आप क्या सोचते हैं कि ऐसा कब तक बना रहेगा, आखिर मनुष्य एक भूमिका को दोहराने के बाद अधर में जब खड़ा हो जायेगा तो आखिर उसे जीना तो समाज में ही है। जब समाज में जीना है तो कोई भी समाज का रूप सामने फिर बनना शुरू होगा और वो समस्याएं फिर भी आयेंगी।

आचार्य श्री—ये जो बात है न इसे ऐसा देखना चाहिये। समस्याऐं निरन्तर आयेंगी और निरन्तर बाहर होना पड़ेगा। क्योंकि मनुष्य का स्वभाव जैसा है वो आज भी वैसा ही है। अगर उसने महावीर के पास सम्प्रदाय बनाया तो वो मेरे पास भी बनायेगा और आपके पास भी बनायेगा। वो आदमी तो वही है। लेकिन इस कारण महावीर पैदा होना बंद कर दें तो बड़ी मुश्किल हो जायेगी। याने महावीर डर जायें कि ये आदमी सम्प्रदाय बनायेगा, हमें पैदा ही नहीं होना चाहिये नहीं महावीर को अपनी फिक्र करनी चाहिये। इसको अपनी फिक्र करनी चाहिए। ये बनायेगा महावीर तोड़ते रहेंगे। इतना करना पड़ेगा। अब देखना यह है कि अन्ततः जीतता कौन है। सवाल आज का नही कल का नहीं। सवाल अन्त का है। धारणा यह है कि महावीर कितनी बार हार जायें अन्ततः जीत उनकी होनी चाहिये। क्योंकि ठीक वो कह रहे हैं। और अगर गलत हम कर रहे हैं तो आज नहीं तो कल हमें हारते जाना पड़ेगा। कोई फिक्र नहीं कि अनन्तकाल तक ये चलें लेकिन इस वजह से, वो जो गिराने आता है उसे डर के रुक जाने की जरूरत नहीं है। और ये डर तो है ही कि एक बात मैं आज कहता हूं। दस लोग मुझे प्रेम करना शुरू करते हैं। वो मेरे साथ खड़े होते हैं तो उपद्रव तो शुरू होने वाला ही है। लेकिन मैं ये मानता हूं कि कम से कम पुराने उपद्रव से नया उपद्रव अच्छा होता है। अच्छा इसलिये कि कम से कम ताजा तो होता है। और ताजा होने की वजह से उसमें एक जिन्दगी होती है। थोड़े दिन की सही एक झलक होती है फिर मर जायेगी, सभी चीजें मर जाती हैं। आज सुबह एक फूल खिला था। साँझ भर गया। कल भी पानी दे रहा हूं पौधे में। मैं जानता हूं कि फूल खिलेगा और साँझ मरेगा। आखिर जो चीजें जन्मती हैं वो मरती हैं। सम्प्रदाय भी जन्मेंगे और मरेंगे। हमने ही एक पागल मोह ले लिया है इस जगत में कि कुछ चीजों को हम मरने न देंगे। ये बात ही गलत है। जहाँ सभी चीजे जन्मती और मरती हैं, वहाँ सम्प्रदाय भी बनेंगे और मरेंगे। और बनते रहेंगे, मरते रहेंगे, लेकिन कुछ लोगों को ये हिम्मत जुटाके निरन्तर नये के जन्माने की दिशा में कुछ करते ही जाना चाहिये। लेकिन हमारा क्या है? सवाल ये नहीं कल दूसरा बन जायेगा, उलझाव हमारा यह है कि पुराने से टूटना इतनी आन्तरिक पीड़ा है इतना दुख है। उस दुःख को हम झेल नहीं पाते। वो तपश्चर्या है। एक आदमी भूखा रह सकता है। वो तपश्चर्या नहीं। क्योंकि भूखों को इतना आदर मिलता है कि उसे तप कहना गलत है। एक आदमी उपवासा बैठा है। इतने लोग पैर छूते हैं जिससे बड़ा सुख मिल रहा है उसको। अब तप का कोई कारण नहीं। अब तो तप यही है कि जहां जहां हमें आदर मिलता है, आदर मिलने के कारण हम गलत से चिपके रहते हैं। तो हमें आदर की फिक्र छोड़के सही दिशा में कदम उठा लेने चाहिये। अब तपस्वी का रूप यही होगा कि आदर की फिक्र छोड़ दे।

साध्वी चन्दना—इन दिनों मुनिश्री ने नये दार्शनिक तत्वों का उद्घाटन किया है। उस पर समाज की प्रतिक्रिया इतनी आलोचनात्मक है। आज ही सुबह मुनिश्री कह रहे थे कि बहुत लोगों को सुकरात बनना पड़ेगा। बहुत लोगों को जीसस बनना पड़ेगा उसके बाद ही सत्य का दर्शन हो सकेगा।

आचार्य श्री—ये तो बिलकुल ठीक ही है। आलोचना भी होगी। विरोध भी होगा। लेकिन अगर हम आलोचना को शान्त करने की कोशिश में लग जायें तो गलती हो जाती है। हमें आलोचना को भड़काना हीं चाहिये क्योंकि वो जो विरोध है जितना स्पष्ट और निखरा हुआ हो जाता है, उतना ही निखरने का हमें भी मौका मिलता है। याने मेरी अपनी समझ ये है कि मित्र तो कैसा भी चुन लें तो हर्ज नहीं। शत्रु जरा बड़ा ही

चुनना चाहिये, वो हमें निखारता है। उससे लड़ना पड़ता है न। २४ घन्टे लड़ना पड़ता है, और हम क्या करते हैं। मित्र तो बहुत सोच समझ के चुनते हैं। शत्रु किसी को भी चुन लेते हैं। और हमारे मुल्क में थोड़ा दुर्भाग्य भी है वो ये कि एक अर्थ में तो हमने जीसस और सुकरात कभी पैदा ही नहीं किया।

साध्वी चन्दना—गांधी हुये हैं हमारे मुल्क में

आचार्य श्री—नहीं। जरा भी नहीं, गान्धी को एक आदमी ने मारा और पूरा समाज आदर दे रहा था और जीसस या सुकरात को पूरे समाज ने मारा और एक भी आदमी आदर देने वाला नहीं था। गान्धी का मामला एक हत्या का मामला है। जीसस को जिस दिन मारा गया तो सारा समाज विरोध में था। याने सबने मारा था समझो न फर्क तू दोनों में। गान्धी को न जोड़ना तू उसमें। गान्धी का Murder साधारण Murder है इसमें कीमत की बहुत बात नहीं है। सुकरात और जीसस को सारे समाज ने मारा है। जब जीसस को रात में पकड़ के ले गये हैं। उनका एक शिष्य है जान। वो उनसे पूछता है कि मैं पीछे पीछे चलूँ। जीसस जान से कहते हैं कब तक तू चलेगा, मैं सोचता हूं कि सूरज उगने से पहले तो तू तीन दफे इन्कार कर चुका होगा कि मैं जीसस के साथ नहीं हूं। मैं! और इंकार करूंगा? मैं कभी नहीं इंकार करूँगा। जीसस को ले जा रहे हैं और जान पीछे २ चल रहा है। जो उन्हें पकड़ ले जा रहे हैं उन्हें ये आदमी अजनबी मालूम पड़ा है। उन्होंने पूछा, तू कौन है? जान कहता है। मैं अजनबी हूं और जीसस उससे लौटके कहते हैं कि अभी सूरज नहीं उगा है। और जिस वक्त सूली लगी जीसस को एक आदमी भी हिम्मत नहीं कर सका ये कहने की कि ये सब गलत हो रहा है। गांधी की हत्या तो बहुत साधारण है। जीसस और सुकरात का मामला अद्भुत है। उनका मुकाबला ही नहीं है। सुकरात को मारने के पहले अदालत ने ये कहा कि यदि जो तुम कहते हो कहना बंद कर दो तो हम तुम्हें छोड़ने को राजी हो जायेंगे। और अगर तुम्हें कहना ही हो तो तुम ऐथन्स छोड़ दो। तो भी हम तुम्हें छोड़ने को राजी हो जायेंगे। तो सुकरात ने कहा कि आप मुझे पक्का भरोसा दिलाते हैं कि फिर मैं न मरूँगा? अदालत ने कहा ये भरोसा हम कैसे दिला सकते हैं। तो सुकरात ने कहा फिर मुझे सत्य बोलते ही मरने दो। जब मरना ही है तो भाग के मरूँ, झूठ बोल के मरूं। इससे अच्छा ही है कि सत्य बोलते ही मर जाऊं।

और सुकरात ने कहा तुम सोचते हो कि मैं सत्य बोलता हूं तो तुम गलती में हो। मैं कुछ और बोल ही नहीं सकता तो वचन कैसे दूं। मैं जो बोल सकता हूं वो बोलता ही रहूंगा सुकरात को तो विकल्प था। पूरा विकल्प था कि तुम बच सकते हो। और ऐथन्स कोई बड़ी बस्ती न थी। तुम एथेन्स की सीमा छोड़ दो लेकिन ये सीधा वरण किया हुआ मामला है। ये कोई चोरी-चपाटी से मार नहीं डाला है किसी ने। ये तो सीधा वरण किया हुआ है। अदालत को उसने कहा है कि मैं सत्य बोलता नहीं हूं। मैं तो सत्य हो गया हूं। इसलिये अब जो मैं बोलूँगा वो सत्य ही होगा। और दूसरी कठनाई उसने ये कहा अगर मैं न मरूं तो तुम मुझे लिख के दे दो और अदालत ने कहा हम इतना ही कर सकते हैं कि न मारें। लेकिन तुम मरोगे नहीं इसका वचन हम नहीं दे सकते। तो सुकरात ने कहा, जब मरना ही है देर अबेर, तो फिर अभी क्या बुरा है। और जब सुकरात ने स्वीकार कर लिया तो उसका एक शिष्य है क्रेटो तो उसने जाके सुकरात से पूछा कि हम आपको दफनाने के लिये किस विधि का उपयोग करें। तो सुकरात ने कहा देखो मजा वो जो मुझे अपना दुश्मन समझते हैं वो मुझे मार रहे हैं और वे जो मुझे अपना मित्र कहते हैं वो मुझे दफनाने का इन्तजाम कर रहे हैं। उसने क्रेटो से कहा तुम फिक्र मत करो। मैं मर ही जाऊँगा तो दफनाना हो ही जायेगा जब मारने में अड़चन नहीं आ रही तो दफनाने में क्या बाधा पड़ेगी। एक और बात उसने कही मरते वक्त क्रेटो से। क्रेटो याद रखना तुम जिन्दा हो तो भी मरे हुये हो। मैं मर जाऊंगा तो भी जिन्दा रहूंगा। जब तुम सब दफना दिये जाओगे तो भी मैं जिन्दा रहूंगा। और अगर तेरा

नाम रहेगा तो सिर्फ इस वजह से कि मैंने तुझे क्रेटो कहके पुकारा। (हंसी)

उनकी शहीदगी बहुत और अर्थ की है। और हिन्दुस्तान ने कोई आदमी पैदा ही नहीं किया उसके कई कारण हैं। सबसे बड़ा कारण कवि जी यह है कि हिन्दुस्तान के पास जितने बड़े विचारक पैदा हुये, वो सब बड़े घरों के लड़के थे। इसलिये आप मार नहीं सके उनको। महावीर राजा का बेटा, बुद्ध राजा का बेटा, कृष्ण राजा का बेटा, राम राजा का बेटा जैनियों के चौबीसों तीर्थंकर राजाओं के बेटे। सब राजाओं से बेटे हैं। जिस प्रजा में वे घूम रहे थे वो उनके बाप की प्रजा थी। मारना आसान नहीं था। जीसस मारा गया वो मामला और है। क्योंकि वो एक बढ़ई का लड़का था। जिसको कोई बचाने वाला न था। हिन्दुस्तान में एक भी गरीब तीर्थंकर नहीं हुआ ये बड़े दुःख की बात है।

प्रश्न (एक सज्जन का) : गौशाला को क्या कहेंगे आप ? महावीर के समय में गौशाला हुये और महावीर के कठोर विरोधी थे। उसके Followers अनुयायी बहुत थे। महावीर से ज्यादा थे। वे भी तो स्वयं को तीर्थंकर कहते थे न ?

आचार्य श्री : वे अपने आपको तीर्थंकर कह रहे थे यही उनकी भूल हो गई। अनुयायी होने की कठिनाई नहीं है। कमजोर आदमी सदा ही अनुयायी होने के लिए तैयार हैं। असल में तो आत्म हीनों के अतिरिक्त और कोई अनुयायी बनता ही नहीं है ? लेकिन अपने को तीर्थंकर कहना अपनी आत्महत्या कर लेना है।

वो अपनी स्थापना कर रहे थे (एक स्वर) स्वयं की स्थापना करने के पागलपन में जो पड़ा वो मर गया और आप सबने मिल कर, आप सब जैनियों ने मिल के गौशाला को महावीर के मुँह से जो शब्द कहलवाये अगर दुनियाँ पढ़ लेगी तो महावीर की इज्जत दो कौड़ी की नहीं रह जायेगी।

लेकिन वो हमने कहलवाये महावीर ने नहीं कहे (एक स्वर)

हाँ वो आपने कहलवाये महावीर ने नहीं कहे और अगर महावीर ने कहे तो हद हो गई।

मुनि श्री : हमारे जो साथी हैं वो कहते हैं महावीर ने ये सब कहा। लेकिन मैं कहता हूं महावीर ने नहीं कहा, हमने ही जोड़ दिया है।

आचार्य श्री : वो हमारा ही जोड़ है क्योंकि दो बातें ही सम्भव हैं। अगर महावीर ने कहा तो फिर महावीर का नाम भी उठाने की जरूरत नहीं।

मुनि श्री : जोड़ा बड़ा गलत जोड़ा गया। जोड़ने वाले व्यक्ति इतने ऊंचे स्तर के थे लेकिन जोड़ने वाले व्यक्ति ने ये नहीं देखा कि हम किस व्यक्ति के मुँह से क्या कहलवा रहे हैं ऐसा कैसे नहीं सोच पाये वो लोग।

आचार्य श्री : उसके बहुत कारण हैं। ज्यादा बड़ा कारण तो यह है—ये जो हमको आज बोध हो रहा है ये युग की चेतना के विकास के कारण हो रहा है। ये हमें दो हजार साल पहले पता भी नहीं चला था कि ये शब्द गलत हैं। ये चेतना विकसित हुई है। अब हमको लगता है कि महावीर के मुँह में ये शब्द बड़े बेहूदे हैं। अगर महावीर ने भी कहे हैं तो महावीर का अब निपटारा कर देना चाहिये। अब जरूरत ही नहीं इस आदमी की अब हमारे सामने दो ही विकल्प हैं या तो हम इसमें कांट छांट करें और कहें कि ये शब्द महावीर ने नहीं कहे और या फिर हम कहें कि अब महावीर की ही कोई जरूरत नहीं। और आप जो हैं महावीर पर बड़ी कृपा कर रहे हैं। वो वकालत है। लेकिन दो हजार साल तक अगर चिन्तन हमारा यही रहा····

मुनि श्री : चन्दना ने आज सुबह यही कहा कि कवि जी बचाव कर रहे हैं महावीर का। बचाव तो नहीं है। लेकिन कुछ श्रद्धा है ऐसी····

आचार्य श्री: न। अगर श्रद्धा बस आप कहेंगे तब अर्थ नहीं रह जाता महावीर के प्रति। मैं ये कहना चाहता

हूं कि महावीर के व्यक्तित्व में वो असंगत है। इनकी संगति नहीं है। याने एक आदमी जिसने जिन्दगी भर दूसरे के रास्ते पर फूल बिछाए हों, उसकी खबर मिले कि उसने किसी की छाती में छुरा भोक दिया तो ये बात असगत है। या तो पहली बात झूठ थी या दूसरी बात झूठ है। ये दोनों बातें एक ही साथ एक ही आदमी में असंगत हैं। याने मैं कहूंगा कि श्रद्धा के कारण नहीं बल्कि सीधे तर्क के कारण असंगत है। श्रद्धालु का मन तो होता है कि हमारे महावीर बिल्कुल अच्छे हैं। वो श्रद्धालु का मन तो बिल्कुल ठीक है। मैं तो तर्क की वजह से कहता हूं। महावीर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व में वो कटराडिक्टरी हो जायेगा। वो इतना कंटराडिक्टरी है कि महावीर के लिये संभव ही नहीं हो सकता और अगर संभव हुआ तो फिर महावीर का बाकी सारा हिसाब झूठा है। ये जो दो हजार साल तक हम बर्दाश्त कर सके उसका कारण यह है कि हमें बोध नहीं हुआ इस बात का। और देखें जैसे बाल्मीकी रामायण है उसमें बाल्मीक राम से ऐसे शब्द बुलवाते हैं सीता के प्रति जो आज बिल्कुल अभद्र हैं और तुलसीदास ने वो मिटा दिये तीन सौ साल पहले। क्योंकि तीन सौ साल पहले तुलसीदास को यह ख्याल में आ गया कि यह बात अभद्र हो गई कि राम सीता को लेके आते हैं और सीता से कहते हैं कि तुम यह न समझना कि हम तुम्हारे लिए युद्ध लड़े हैं। ये युद्ध तो हम कुल की मर्यादा के लिए लड़े हैं। ये ऐसा बेहूदा है कि राम के मुँह में कहीं जमता नहीं। याने राम बिल्कुल गड़बड़ हो जायेंगे। तुलसीदास ने उसको बिल्कुल ही हटा दिया। मेरा मानना यह है कि जैसे २ हम विकसित होते हैं वैसे २ हम उस सब में भी परिष्कार करते हैं जो सब कल तक हमने माना था। याने मेरा मानना ऐसा है कि महावीर कोई एक दफा पैदा होके मर जाते हैं ऐसा नहीं है। उनको हर युग में हमें परिष्कार देना होता है। उन्हें युग के अनुकूल बनाना होता है। वो हर युग में असंगत हो जायेंगे। पुराने युग का महावीर इस युग में असंगत हो जायेगा। हमें हर युग में उन्हें नई शकल देते ही जाना चाहिये। तभी वो सार्थक रह पाता है। तभी हमारे युग की चेतना के साथ उसकी सार्थकता बनी रह पाती है। अन्यथा उसकी सार्थकता टूट जाती है। और महावीर के साथ तो भारी अन्याय है.....

मुनि श्री : समाज के साथ आप परिष्कार की भाषा में सोचते हैं या कि उसके निर्माण की भाषा में।

आचार्य श्री : परिष्कार की ही भाषा में ही सोचा जा सकता है क्योंकि जो है उसको ही परिष्कृत करना होता है। निर्माण भी परिष्कार ही है।

चन्दना : परिष्कार या परिवर्तन। पूरा परिवर्तन या परिष्कार। क्रान्ति या जो कुछ है उसमें थोड़ा सा परिवर्तन ?

आचार्य श्री : सदा ही परिष्कार चलता है इसको थोड़ा समझने जैसा है। अगर हम बहुत दिन तक परिष्कार न होने दें तो क्रान्ति होती है। क्रांति जो है वो रुका हुआ परिष्कार है। अगर परिष्कार चलता रहे तो क्रान्ति बिलकुल अनावश्यक है। परिष्कार चलता रहे तो क्रान्ति की क्या आवश्यकता है ? Refinement अगर रोज होता रहे। याने हम अपने समाज को रोज ऐसा बनाते रहें जैसा जरूरत है। तो क्रान्ति अनावश्यक है। क्रांति की जरूरत इसलिये पड़ जाती है कि हम हजारों साल तक परिष्कार नहीं होने देते। वो इतना ज्यादा सड़ जाता है कि उसके परिष्कार का सवाल ही नहीं रहता। उसको फेंकने जैसा हो जाता है। जो लोग परिष्कार नहीं होने देते, क्रान्ति उनके जुम्मे है। वो जिम्मेदार हैं उसके लिये क्योंकि वो हालत उस जगह ला देते हैं कि हम मरीज को दवा नहीं दे पाते। वो इतनी दवा नहीं देने देते और आप्रेशन करवा देते हैं। जब आपरेशन होने लगता है तब वो चिल्लाते हैं कि दवा से काम चलाओ। और दवा से जब काम चल सकता था तब वो दवा नहीं करने देते। ऐसी सब दिक्कत है तो, अब तो हालत खराब कर दी उन्होने लेकिन फिर भी मैं मानता हूं।

मुनि श्री : हमारे समाज में क्या परिष्कार की संभावना है ? परिष्कार में कुछ समस्यायें कुछ समय तक हल हो सकेंगी ।

आचार्य श्री : बिल्कुल हो सकती हैं । संभावना पूरी है । बल्कि जितनी संभावना आज है उतनी कभी भी न थी । यह कई कारण से है । हम बहुत बड़ी संभावना के युग में हैं । इतनी संभावना का युग ही कभी न था । उसका कारण ये है कि पुराना आके एकदम ही असंगत हो गया है । पहले क्या होता था । असंगत होने में टाईम गेप बहुत लम्बा होता था । जैसे कि ईसा के मरने के बाद १८०० वर्ष में जितना ज्ञान बढ़ा उतना पिछले १५० वर्ष में बढ़ा । पिछले १५० वर्ष में जितना ज्ञान बढ़ा उतना पिछले १५ वर्ष में बढ़ा । जितना पिछले १५ वर्ष में बढ़ा उतना पिछले ५ वर्ष में बढ़ा । तो १८०० वर्ष इतना लम्बा वक्त होता था वो Adjust हो जाता था । अब तो इतने जोर से परिवर्तन हो रहा है कि अगर आप परिवर्तित नहीं होते तो सिर्फ मरेंगे ।

याने हमारी हालत ऐसी आ गई है कि या तो हमें परिवर्तित होना ही पड़ेगा या मर ही जाना पड़ेगा । और हम ऐसी कौम हैं ऐसी मरी कौम हैं कि जब तक हमें मरना ही न पड़े, तब तक हम परिष्कृत न होंगे । जब मरीज के मरने की हालत आ जाये, तो हम सोचते हैं कि अब आप्रेशन करा दो । तब आप्रेशन कराने ले जाते हैं हम ।

तो वह घड़ी आ गई है जब परिष्कार के लिये हमें तैयार होना ही पड़ेगा । और अब कठिनाई सिर्फ इतनी ही है कि अगर परिष्कार सोच विचार पूर्वक हो सके, जो कि हो सकता है तो हितकर होगा नहीं तो अहितकर भी हो सकता है । क्योंकि अकसर ऐसा होता है कि चीजें जब किसी एक अति पर बहुत जकड़ जाती हैं तो परिणाम प्रतिक्रिया में दूसरी अति पर जाने का मन होता है । और मध्य में सदा सब कुछ है । और हमारा चित्त जब एक चीज से बहुत ऊब जाता है, तो वह दूसरी अति पर जाता है । और दूसरी अति नई बिमारियां ले आती है । जो अति की बिमारियां हैं । तो खतरा वह है हमारे साथ । खतरा वह है, कि हम दूसरी अति पर न चले जायें परिष्कार तो होगा । दूसरी अति पर न जाना हो तो जो अति हमारी अब तक की पकड़ी हुई है उसे शिथिल करते जाना चाहिये । उसे इतना शिथिल कर देना चाहिये कि प्रतिक्रिया बहुत सख्त न हो सके । तो हम मध्य पर जाके रूक जायें । इधर की जो अति है इसको शिथिल करना पड़ेगा । अति शिथिल करना पड़ेगा । बहुत शिथिल करने की जरूरत है और चूंकि परिष्कार करना है । अनिवार्य हो गया है । नहीं तो हम जागतिक स्थिति में इस बुरी तरह पिछड़ गये हैं कि कल्पना के बाहर पिछड़ गये हैं उसका हमें पता भी नहीं चलता क्योंकि जागतिक स्थिति का हमें बोध भी बहुत कम है । आज योरूप और अमेरिका में एक हजार नये ग्रन्थ प्रतिदिन छप जाते हैं । और योरूप व अमेरिका का ग्रन्थ, हमारे जैसा नहीं होता कि एक आदमी एक ही बात जिन्दगी भर Repeat किये चला जा रहा है । वही २ बात लिखे चला जा रहा है बार २ ऐसा नहीं होता । एक हजार ग्रंथ प्रतिदिन छप रहे हैं । हालतें ये हो गई हैं कि जितने जोर से ज्ञान बढ़ रहा है, उतने जोर से उसको आत्मसात् करना मुश्किल हुआ जा रहा है । एकदम मुश्किल हुआ जा रहा है । उसको कैसे आत्मसात किया जाये । प्रत्येक चीज के सम्बन्ध में इतनी नई धारणायें आती चली जा रही हैं । जो पुरानी धारणाओं को बिल्कुल ही व्यर्थ किये दे रही हैं । कि हम अगर २५-३० साल चूक गये तो जैसे आदिवासियों और हमारे बीच एक फासला पड़ गया है । वैसे पश्चिम और हमारे बीच फासला पड़ जायेगा । तो इसलिये हमें तो २५ साल बहुत ही कीमती हैं । उसमें हमें तीव्रता से गति करनी चाहिये । बहुत तीव्रता से । अब जैसे उदाहरण के लिये आपको कहूं । जैसे संन्यासी है हमारा । साधु है हमारा । गृहस्थ एक अति है । हमारा साधु दूसरी अति है । ये दो अतियों पर हमने समाज को बांटा हुआ है और इन दो अतियों पर हम समाज को चलाने

की कोशिश करते रहे है। भविष्य में ये दोनों अतियां खतरनाक सिद्ध हो सकती हैं। अब हमे एक ऐसा गृहस्थ पैदा करना होगा जो सन्यस्थ भी हो। और हमें एक ऐसा संन्यासी पैदा करना पड़ेगा जिसके और गृहस्थ के बीच खाई न हो। नहीं तो हम नहीं बच पायेंगे। हम खो जायेंगे। संन्यासी को आने वाले ५० वर्षों में समाप्त हो जाना पड़ेगा। अगर वो संन्यासी की नई धारणायें विकसित नहीं कर लेता तो वो खो जायेगा। एकदम खो जायेगा।

मुनिजी : स्थिति आ गई है।

आचार्य जी : हाँ! बिल्कुल आ गई है। वो एकदम बोझिल हो जायेगा और मुश्किल में डाल देगा। तो सारी तरफ.....

और हमारी जितनी पुरानी धारणायें हैं। जो जो धारणायें समाज को विकासमान नहीं बनाती उन्हें हमें सख्ती से छोड़ने की हिम्मत जुटानी पड़ेगी। सख्ती से छोड़ने की। अब जैसे कि हमारी धारणा रही सदा की। उदाहरण के लिये कहता हूं आपको। अब तक हम यही मानते रहे कि एक आदमी गरीब है तो वो अपने कर्मों के कारण गरीब है। ये बात इतनी बेहूदी हो गई है, इतनी Absurd हो गई है। इसकी कोई संगति नहीं रही या तो इसकी वजह से आपका पूरा कर्म का सिद्धान्त डूबेगा। और या आपको कर्म के सिद्धांत की नई व्याख्यायें खोज लेनी चाहिये। अब गरीब से उसको हटा देना पड़ेगा। क्योंकि अब साफ है कि गरीब समाज की व्यवस्था के कारण है। वो अपने कर्म के कारण नहीं है। मगर हमारी अब तक की सारी व्याख्या उसको कर्म से बांधे हुये हैं।

मुनी श्री : हां! उसी की स्थापना करती आयी।

आचार्य श्री : और अगर हम उसी स्थापना पर जिद किये चले गये, खतरा ये नहीं है। खतरा ये है कर्म का सिद्धांत जिसकी बड़ी कीमत है। और जिसका गहरा मूल्य है। वो पूरा का पूरा सिद्धांत इस नासमझी से जुड़ने की वजह से नष्ट होगा। वो नष्ट हो जायेगा। वो व्यर्थ हो जायेगा। जैसे कि मैं देखता हूं कि भाग्य की हमारी एक धारणा है। भाग्य की धारणा आज के युग में एकदम असंगत हो गई है। पुरुषार्थ एकदम अर्थ-पूर्ण हो गया है। भाग्य एकदम व्यर्थ हो गया है। अगर हम पुरानी भाग्य की धारणा से पुरुषार्थ को काटने का उपाय करते रहे, तो उससे पुरुषार्थ नहीं मरेगा। सिर्फ भाग्य मरेगा। मेरा मानना है कि भाग्य की धारणा में भी एक बड़ा गहरा रहस्य है। जो अगर हम उसे पुरुषार्थ के विरोधी से हटा लें तो बच जायें। मेरी अपनी समझ ये है कि जिस व्यक्ति को भी गहरे ध्यान मे प्रवेश करना है, अगर वो ये मान ले, समझ ले, जान ले कि जो हो रहा है सो हो रहा है। मेरा कोई बस नहीं तो तत्काल वो कर्म के जगत से अकर्म में प्रवेश कर जाता है। उसे कुछ करने का कोई सवाल नहीं बचता। जो हो रहा है। सो हो रहा है। मैं कुछ नहीं कर सकता हूं। तो अब उसको जो करने की दौड़ है, एकदम शिथिल हो जाती है। उसको बेचैनी का कोई कारण नहीं रह जाता। वो भीतर जा सकता है। तो अब मैं ऐसा सोचता हूं कि हमें भाग्य को और पुरुषार्थ को विरोधियों की तरह हटा देना चाहिये। भाग्य पुरुषार्थ का विरोधी नहीं है। भाग्य अध्यान का विरोधी है। मैं ये कह रहा हूं। धारणाओं को जो नई शक्ल देनी पड़े। इधर देख के मैं हैरान हुआ। अगर कोई व्यक्ति इधर मेरे से कई व्यक्ति ध्यान से सम्बन्धित हुये हैं। जिस व्यक्ति को भी पुरुषार्थ की धारणा है। वो ध्यान में नहीं जा पाता। वो जा ही नहीं पाता। उसके पुरुषार्थ के साथ अहंकार है। अहंकार के कारण वो ये कहता है कि मैं कुछ कर लूंगा। ऐसा कर लूंगा, ऐसा कर लूंगा, ऐसा कर लूंगा। तो वो कभी भी Relax नहीं हो पाता। Relax हो कैसे? अगर उसको एक बार ख्याल आ जाये कि जो हो रहा है। सो हो रहा है। मैं कुछ भी नहीं कर सकता। मैं नदी के ऊपर एक सूखा पत्ता हूं जो बहा जा रहा है। तो वो अचानक पाता

है कि सब गया और वो शान्त हो गया। और ध्यान में गति हो गई। तो हमें सारी पुरानी धारणाओं अवधारणाओं को बहुत नये संयोग नये अर्थ और नई संगति, सारी-नई परिस्थिति में देने का काम है। वो हम नहीं कर पा रहे। इसलिये बहुत ही नुकसान होने का डर है। नुकसान दो किस्म से है। अगर पुरानी व्यवस्था जीते तो परिष्कार न हो पायेगा। और अगर परिष्कार की जो धारणायें चल रही हैं वो जीत जायें तो पुराने में जो भी सुन्दर और सत्य है सब मिट्टी हो जायेगा। तो मेरे जैसे आदमी को बड़ी तकलीफ हो जाती है। इसलिये मेरी तकलीफ बहुत भारी है। इधर मुझे पुराने से भी लड़ना है और नये से भी लड़ना है। दोनों ही मेरे दुश्मन हो जाते हैं। नया इसलिये दुश्मन हो जाता है कि आपने ध्यान-समाधि की ये क्यों बात की। और पुराना इसलिये दुश्मन हो जाता है कि आप और कर्म के सिद्धान्त का ये मतलब करते हैं। तो बहुत कठनाई हो गई है। लेकिन।... हमें पुराने आदमी की जड़ता से लड़ना है और नये आदमी की जल्द बाजी से तब कहीं कुछ हो पायेगा। नहीं तो नहीं हो पायेगा।

मुनि श्री : इसके लिये रचनात्मक रूप रेखा कुछ तैयार हुई।

आचार्य श्री : इधर मेरा अपना ख्याल ये है कि अभी इस मुल्क को १५-२० साल रचनात्मक रूप रेखा बनाने की जल्दी नहीं करनी चाहिये। १५-२० साल सारे मुल्क की प्रतिभा को चिन्तन और विचार की फिक्र करनी चाहिये। रचनात्मक करने की भूल में ही गांधी इस मुल्क में व्यर्थ हुये। उनका रचनात्मक करने का मोह बहुत तेज था, कि जल्दी रचना करो। जिस मुल्क में चिन्तन न हो, वो मुल्क क्या रचना करे। तो उल्टा हो गया। वो जिनके हाथ में मुल्क को सभाल गये, उनके पास कोई चिन्तन तो था नहीं और निहायत छोटी और बचकानी योजनायें थीं जिनको वो रचनात्मक कहते। तो मैं ये मानता हूं कि हमको १५-२० साल के लिये बनाने की फिक्र छोड़ के सोचने की फिक्र करनी चाहिये। सारा मुल्क सोचे। घर २, मन्दिर २, स्थानक २, गांव २, मुल्क सोचे। इतने सवाल हम उठायें। इतना चिन्तन हम चलायें। १५ वर्ष के इस मन्थन मे वो निकले। वो मन्थन में मक्खन की तरह बाहर आ जायेगा। याने मैं और आप उसको नहीं बनायेंगे, वो बन जायेगा। और मैं और आप बना भी नहीं सकते। सवाल इतने बड़े हैं कि मैं कोई रचनात्मक व्यवस्था बनाऊ वो छोटी पड़ जायेगी। आप कोई व्यवस्था बनायें वो छोटी पड़ जायेगी। हम इतने छोटे हैं और सवाल इतने बड़े हैं और मुल्क इतना बड़ा है। एक ही रास्ता है कि मुल्क एक दफे चिन्तन करने लगे।

एक सज्जन : लेकिन क्योस जो आ रहा है। Chaos is coming.

आचार्य श्री : क्योस आपकी कृपा से आ रहा है। क्योंकि आपने लोगों को इतने सख्त ढांचों में बांधा है कि अब एक ही रास्ता रह गया है कि ढांचा तोड़ दे आपका सिर खोल दें। समझे न। आप ऐसा बांध दिये हैं कि बिल्कुल हिलने डुलने नहीं देते। तो क्योस आयेगा। लेकिन अब हमें क्योस का भी स्वागत करना चाहिये। क्योंकि अराजकता से भी कुछ जन्म ले सकता है। अब इतना ही ध्यान रखने की जरूरत है कि कहीं ऐसा न हो कि क्योस ही भर रह जाये। क्योस तो आ रहा है अब हमें सवाल ये है कि वो अराजकता जो बहुत सी शक्तियों को मुक्त कर देगी उन शक्तियों का नियोजन। तो उसके लिये चिन्तन चाहिये। तो मैं तो एक ही काम मे लगा हूं कि कितने सवाल उठा सकूं कितने लोगों के दिमाग को मुश्किल में डाल सकूँ। इतना काम करता हूं। वो अगर होता है तो इस १५ साल में....

मुनि श्री : इसका मतलब हुआ आप लोगों के दिमाग को उलझा रहे हैं।

आचार्य श्री : अच्छी तरह उलझा रहा हूं बिल्कुल अच्छी तरह उलझा रहा हूं। क्योंकि उनको भ्रम है

सुलझे होने का। वो उलझे हुये हैं उनको भ्रम है सुलझे होने का। और अगर उन्हें इसका ख्याल आ जाये तो कोई रास्ता बन सकता है।

प्रश्न (एक सज्जन का) : हम समझते हैं मांसाहारी बिलकुल कंडम हैं। शाकाहारी बहुत अच्छा है। शराब पीना बहुत गुनाह है। इस विषय में आपके क्या विचार है।

आचार्य श्री : हूं ! मांसाहारी बहुत बुरा है ऐसा मानना मांसाहार करने से भी बुरा है, क्योंकि यह बहुत हिंसक वृत्ति है। और आप किसी का मांसाहार निन्दा करके न छुड़ा सके हैं और न छुड़ा सकते हैं। बल्कि एक बहुत मजे की बात है कि बहुत निन्दा से मांसाहार में एक रस आ जाता है। जो उसमें है ही नहीं, इतनी जब शोर गुल लोग मचाते हैं, निन्दा करते हैं तो निषेध से रस पैदा हो जाता है।

मुनि श्री : यह तो मनोवैज्ञानिक स्थिति है।

आचार्य श्री : और बड़े मजे की बात है कि मांसाहारी जिसको आप कहते हैं, वो शाकाहारी से आमतौर से अच्छा आदमी होता है। और उसका कारण है कि आपको भी अगर शाकाहार के जाल में जन्म से न बांधा जाये तो मांसाहारी होते हैं। समझे आप न। आप शाकाहारी सिर्फ जन्म के कारण हैं किसी रूपान्तरण के कारण नहीं। आपके जीवन म कोई ऐसी क्रान्ति नहीं हो गई कि आपके लिये मांस खाना अर्थ हीन हो गया हो। मांस खाना आपके लिये गलत हो गया हो। ऐसा कुछ भी नहीं हुआ है।

आपको सिर्फ ट्रेनिंग है, शिक्षा है। इधर मेरी दशा बिलकुल उल्टी है। मेरा कहना ये है, अगर व्यक्ति का चित्त बदले तो उसका आहार अनिवार्य रूप से बदलता है लेकिन आहार के बदलने से चित्त नहीं बदलता। अगर मेरा चित्त बदले तो मेरे कपड़े बदल सकते हैं लेकिन मेरे कपड़े बदलने से मेरा चित्त नहीं बदलता। कैसे बदलेगा ? बदलने से क्या सम्बन्ध ?

सारा परिवर्तन भीतर से बाहर की तरफ आता है। और बाहर से भीतर की तरफ कोई परिवर्तन जाता ही नहीं। इधर मेरा ख्याल रहा है कि महावीर के ध्यान की जो प्रक्रिया है उस प्रक्रिया से गुजरे बिना कोई व्यक्ति शाकाहारी नहीं हो सकता। और इससे गुजर के कोई मांसाहारी नहीं रह सकता। एक घटना आपको सुनाऊं। एक मुसलमान वकील मेरे पास कोई पांच साल पहले आये। उन्होंने आके मुझे कहा "कि मैं बहुत दफे आने का सोचता था आपके पास। लेकिन आया नहीं। इसलिये मैं नहीं आया कि मैं सोचता था कि आप साधु सन्तों का जो कहना रहता है कि मांस न खाओ शराब न पीयो और ये मुझसे छूट नहीं सकता। आज किसी के घर भोजन पर गया था तो अचानक, वहां आपकी बात चली। तो उन्होंने कहा कि वो तो कहते हैं कि कुछ छोड़ो ही मत। तो मैं वहां से सीधा चला आ रहा हूं। क्या आप ऐसा कहते हैं कि कुछ छोड़ो ही मत ?

मैंने कहा, मुझे क्या प्रयोजन तुम्हारे छोड़ने और पकड़ने से। वो तुम्हारे जानने की बात है। तो उन्होंने कहा फिर मैं आपसे कुछ बात करना चाहता हूं। मन बड़ा अशान्त रहता है। ये होता है वो होता है। मैंने उन्हें कहा, आप ध्यान शुरू करें। ध्यान की प्रकिया उनको, वो सात दिन आते थे। ध्यान करते थे। ६ महीने बाद उन्होंने मुझे आके कहा आपने मुझे धोखा दिया। क्योंकि मांस खाना मुझे निरन्तर मुश्किल होता चला जा रहा है।

जितना मन शान्त होता है, उतना दूसरे को दु-ख देना असंभव हो जाता है। अशान्त व्यक्ति दूसरे को दुःख देना चाहता है। शान्त व्यक्ति दूसरे को दुःख देने में असमर्थ हो जाता है। याने शाकाहार जो है वो मांसाहार का छोड़ना नहीं। मांसाहार न कर सकने की स्थिति में आ जाना है। याने शाकाहार, मांसाहार का विरोधी आहार नहीं। बल्कि मांसाहार करने की असमर्थता शाकाहार का जन्म बनती है। मैंने उनसे कहा धोखा मैंने आपको नहीं दिया। मै अब भी नहीं कहता

कि आप मत खाओ। पर उन्होंने कहा, मुझे अब साफ दिखाई पड़ने लगा कि जिस दिन मैं खा लेता हूं। उस दिन मैं ध्यान नहीं कर पाता। जिस दिन नहीं खाता हूं। उस दिन गहरे ध्यान में जाता हूं। तो मैंने उनसे कहा अब तुम्हारे सामने चुनाव है। तुम ध्यान को चुन लो या मांस को चुन लो उन्होंने कहा कि ध्यान इतनी कीमती और आनन्द की चीज है कि मांस को कैसे चुन लूं।

असल में हीरा हाथ में दे दें तो कंकड़ पत्थर छोड़े जा सकते हैं। और आप जिद कर रहे हैं कि कंकड़ पत्थर छोड़ो। कंकड़ पत्थर छोड़ो। और हीरे का कुछ पता नहीं। वो बेचारा कुछ तो मुट्ठी में बांधे। कम से कम खाली तो न हो। आप उसको नाहक परेशान किये चले जा रहे हैं। इसलिये हिन्दुस्थान के शाकाहारी जगत में, शाकाहार को न पहुंचा सके है और न पहुंचा सकते है। क्योंकि उनकी जिद्द है कि मांसाहार छोड़ो। इससे कुछ भी होने को नहीं। बल्कि उनके बेटे भी सब मांसाहार करेंगे। करना ही पड़ेगा। क्योंकि ध्यान उनके पास नहीं है। जिसकी वजह से वो शाकाहारी हो सकते हैं। इसलिये मेरा सारा जोर अर्न्तपरिवर्तन पर है। और उसकी प्रक्रियायें हैं। कितने मजे की बात है कि अगर आप थोड़े से भीतर आनन्दित हो जायें तो आप शराब नहीं पी सकते। उसके कारण हैं।

शराब आदमी पीता है दुख को भूलने के लिये। और शराब का सिर्फ एक ही स्वरूप है कि आप जो भी है उसको भुला देती है। अगर आप आनन्दित हैं तो आनन्द को भुला देती है। अगर आप दुःखी हैं तो दुख को भुला देती है। और आप किसी भी तल के आनन्द को जान लें तो आप नशे में न जाना चाहेंगे। आप हैरान होंगे कि बहुत आनन्दित व्यक्ति, सोने तक में भयभीत होता है। क्योंकि उसका जो बोध है वो खो जायेगा। हां! जितना आनन्द बढ़ता है उतना नशा करने की वृत्ति कम होती चली जाती है। जितना आनन्द क्षीण होता है नशे की वृत्ति बढ़ती चली जाती है। तो इसीलिये मैं कहता हूं किसी से नशा मत छुड़ाना क्योंकि नशा छुड़ा के वो सिर्फ दुःखी रह जायेगा और कुछ भी नहीं होने वाला। और दुःखी आदमी नशेलची आदमी से ज्यादा बदतर सिद्ध होगा। वो दूसरों को दुःख देने लग जायेगा। तो सवाल ये नही है कि उससे आप कुछ छुड़ायें। सवाल ये है कि उसे आप कुछ दें। उसके जीवन में भीतर कुछ आ जाये ताकि वो छोड़ने में समर्थ हो सके। याने उसे इतना धनी बना दें कि कंकड़ पत्थर बीनने का उसका रस चला जाये। इसकी फिक्र करनी चाहिये।

एक सज्जन : अच्छा एक और प्रश्न पूछना है सेक्स के बारे में ?

हां बोलिये

उसमें क्या विचार धारा है आपकी ?

बहुत अच्छी विचार धारा है।

मेरा मानना ये है कि जीवन में जो भी है, उसे सरलता से स्वीकृति चाहिये। अगर उसके पार जाना है तो किसी भी चीज की सरल स्वीकृति चाहिये। और अगर आपने संघर्ष शुरू किया तो आप उसी में उलझ के खड़े रह जायेंगे।

हमारे जीवन में जो भी बुरा है, भला है, क्रोध है, काम है, जो भी है उसकी सरल स्वीकृति, तो पार जा सकते हैं। लड़े तो पार नहीं जा सकते। लड़े की हारे बिलकुल। स्वीकृति से किसी भी वृत्ति के बाहर जाया जा सकता है। उसके रूपान्तर की पूरी प्रक्रिया है। लेकिन पहलाचरण उसका स्वीकृति है। और अगर दुश्मन की तरह स्वीकार किया तो मैं स्वीकार ही नहीं कर रहा हूं। और दुश्मन की तरह स्वीकार करने का मतलब है अपने को दो खण्ड में बाँटना।

मुनि श्री : वो तो रागात्मक वृत्ति तो है। लेकिन उसके रूपान्तर की प्रक्रिया में उसको मोड़। या अपने आप हो जाता है रूपान्तर।

आचार्य श्री : उसके दो ही मार्ग हैं। रूपान्तर तो होता है।

जो लोग काम वासना को तृप्त कर सकते हैं उन्हें काम वासना और ध्यान को संयुक्त करना पड़ेगा तो वो काम वासना को रूपान्तरित कर पायेंगे। जो लोग काम वासना को तृप्त नहीं कर सकते हैं। उनको ध्यान और काम वासना को संयुक्त करना पड़ेगा तो वो उसके पार हो पायेंगे। याने उन्हें ध्यान में संभोग करना पड़ेगा। इसके बिना वो पार नहीं हो पायेंगे। याने मैं ये कह रहा हूं कि गृहस्थ के लिये संभोग में ध्यान मार्ग है। संन्यासी के लिये ध्यान में संभोग मार्ग है। उसको ध्यान में संभोग कर पूरी स्थिति से गुजरना पड़ेगा। तो ही वो पार हो सकता है। सँभोग से ध्यान संबंधित हो तो भी काम का रूपांतरण होता है या ध्यान में संभोग का दर्शन हो तो भी रूपांतर होता है। संभोग में ध्यान तत्काल आत्म बोध (Self-Remembering) को जन्म देता है। ध्यान में संभोग का स्वप्न-दर्शन तत्काल दृष्टा को जगा देता है। मूलतः स्वबोध की आवश्यकता है। साक्षीभाव की आवश्यकता है। साक्षीभाव काम-शक्ति को राम-शक्ति में रूपांतरित कर देता है।

★★★

सत्य : एक दृष्टि

जैसे शरीर को देखने का दर्पण है, वैसे ही स्वयं को देखने का दर्पण भी है, मैं उसी दर्पण की चर्चा कर रहा हूं, वह दर्पण स्व—निरीक्षण (Self Observation) का है।

क्या आप अपने आपके सत्य को देखना चाहते हैं ? क्या उस व्यक्ति को देखना चाहते हैं, मिलना चाहते हैं जो कि आप हैं ?

और क्या, इस संभावना को जानकर कि स्वयं के नग्न रूप को जाना जा सकता है, आपको डर नहीं मालूम होता है ? वह मालूम होना बहुत स्वाभाविक है, उसके कारण ही तो हम स्वयं के संबंध में नये स्वप्न गढते रहते हैं, और उसे सुलाये रहते हैं जो कि हमारी वास्तविकता है, पर ये स्वप्न सही नहीं हो सकते हैं, उनके सहारे कहीं भी पहुंचना नहीं होता है, वे केवल उस समय को और उस अवसर को नष्ट करते हैं, जिससे कि कहीं पहुंचा जा सकता था।

आप सोचते होंगे कि मैं स्वयं की इस नग्नता और कुरुपता और रिक्तता को देखने के लिये क्यों इतना आग्रह कर रहा हूं ? क्या यह अच्छा नहीं है कि जो देखने योग्य नहीं है, उसे देखा ही न जावे ? और क्या यह शुभ और सुन्दर नहीं है कि जो कुरूप है उसे हम आभूषणों से ढंक दें और जो दर्शनीय नहीं है उसे पर्दों में छिपा दें।

साधारणतः हम यही करते हैं, यही रिवाज है, यही प्रचलन है, पर वह प्रचलन बहुत आत्मघाती है, क्योंकि हम जिन घावों को छिपा लेते हैं, वे छिपाने से मिटते नहीं हैं, वरन् और भी घातक हो जाते हैं, और, हम जिन कुरुपताओं को ढांक लेते हैं, वे नष्ट नहीं होतीं, वरन् हमारे समस्त व्यक्तित्व के अंतः स्रोत में प्रविष्ट हो जाती हैं।

★★★

घर बैठे आप भी राजकोट का आनंद लीजिए

—सौभाग्यचंद्र तुरखिया, सुरेन्द्रनगर

आचार्य रजनीशजी राजकोट आ रहे हैं और चार दिन का कार्यक्रम है यह सुनकर ५ मार्च की संध्या मैं भी सुरेन्द्रनगर से राजकोट पहुंच गया। ६ मार्च प्रातःकाल से ही ज्ञानसत्र प्रारंभ होने वाला था। आचार्यश्री के आगमन के समाचार से राजकोट की जनता में खुशी की लहर फैल गई है। अनेक बार सौराष्ट्र की जनता ने अमृत-रस जो चखा था वह फिर पीने को जो मिलने वाला है। सौराष्ट्र के विभिन्न केन्द्रों से अनेक प्रतिनिधि और जिज्ञासु भाई बहिनें उत्साह से भाग लेने पहुंच गये हैं। ६ मार्च को विमान मार्ग से आचार्य श्री राजकोट पधार गये हैं। श्री जयमलभाई परमार का निवास स्थान पावन हुआ है। ठीक ९–४५ बजे आचार्यश्री तेजपाल कलामन्दिर में पहुंच गये हैं, जहां जीवन जागृति केन्द्र राजकोट के सक्रिय कार्यकर्त्ताओं के सहयोग से श्री धीरुभाई दवे के संयोजकत्व में आचार्यश्री की आध्यात्मिक प्रवचनमाला का आयोजन किया गया था। संयोजकों ने प्रवचनों को दो भागों में विभक्त करना उचित समझा था।

अध्यात्मप्रेमी व्यक्तिओं के लिए प्रातःकाल चारों दिन के लिए विषय चुना था—"क्या है मार्ग ? ज्ञान, भक्ति या कर्म ?" और सार्वजनिक सभा के लिए विषय था "नये समाज की खोज" जिसका स्थल था लालबहादुर शास्त्री विद्यालय का विशाल प्रांगण। आयोजकों का विषय निर्वाचन में और विभाजीकरण में एक विशिष्ट हेतु था। सचमुच में जो अध्यात्मप्रेमी और जिज्ञासु होगा वह समय और शक्ति का योग देकर भी सुनने आएगा इसलिए अध्यात्म प्रवचन का समय सुबह और आयोजन खर्च की पूर्तिहेतु दो और पांच रुपये के पास भी चार दिनों के लिए रक्खे थे। सायं की सभा रात्रि को ८ बजे और सबके लिए मुक्त लाभ लेने के लिए रक्खी थी। रात्रि की अपेक्षा प्रातः संख्या का सीमित होना स्वाभाविक था, फिर भी सैकड़ों की तादाद में आचार्यश्री के मुख से अध्यात्म प्रवचन सुनने आना और रसपूर्वक सुनना यह जनता की जिज्ञासा और प्यास को स्पष्ट कर देती थी और स्वयं को किस मार्ग पर ले जाना-इसका समाधान यहाँ मिलेगा, ऐसा समझकर जनता उत्फुल्ल नेत्र और प्रमुदित विस्मित होकर आतुरता पूर्वक श्रवण करने को लालायित दीखती थी। समय हो चुका है, प्रासंगिक थोड़ा विधि स्वागत-आभार आदि हुआ है। अब आपको आचार्यश्री की अमृतवाणी का थोड़ा सा रसास्वाद करवाता हूं। शांति से सुनिये आचार्यश्री कहते है :—

[१] हजारों वर्ष से हमे सिखलाया गया है कि सत्य या प्रभु प्राप्ति के लिए ये तीन मार्ग है— कर्म, भक्ति और ज्ञान। परन्तु मैं कहता हूं इसमे से किसी मार्ग पर चलकर कोई कभी प्रभु तक पहुंच नही सकता, न पहुंचा है, न पहुंचेगा। जगत में सैकड़ों मार्ग प्रभु-प्राप्ति के लिए बताये जाते हैं परन्तु उन सबका इन तीन मे समावेश हो जाता है इसलिए इन तीन मार्गों की चर्चा करूंगा। इनमें से किसी भी मार्ग या सभी मार्गों का अवलंबन लेनेवाला भटक तो सकता है परन्तु प्रभु को पा नहीं सकता। आज तक सभी मार्ग भटकाने वाले सिद्ध हुए है इसलिए ही हजारों वर्ष से यह प्रश्न पूछा जा रहा है क्या है मार्ग ? अब तक इसका निराकरण नहीं हुआ है और न होगा। सभी मार्ग व्यक्ति को भटका देते हैं क्योंकि कोई मार्ग कभी कहीं नहीं पहुंचाता।

[२] जीवन तो है आकाश की तरह, वह जमीन की तरह नहीं है। जमीन की तरह जीवन यदि होता तो अवश्य मार्ग और पद चिन्ह काम दे देते, जिस पर चलकर हम सभी वहां पहुंच जाते। जीवन तो पक्षी की तरह आकाश में उड़ना है, जहां पीछे कोई किसी के पद चिन्ह नहीं छूटते। जिन्होंने भी जीवन पाया है उन्होंने वैयक्तिक रूप से पाया, किसी के पीछे चलकर नहीं। सभी को इसी तरह अपने ही अनुभव से सत्य मिलेगा। कोई किसी के लिए रास्ता नहीं बना सकता। सत्य के लिए कोई बना बनाया मार्ग नहीं है। होता तो फिर जीवन में आनन्द ही न रहता।

[३] ज्ञान, भक्ति [भाव] और कर्म–ये तीनों मन की ही पर्तें हैं। मन के बाहर की परिधि है कभी मन बिना काम के रह नहीं सकता इसलिए उसकी सतत मांग करता है। मन प्रेत की तरह है। प्रेत के मन होता है, शरीर नहीं होता। प्रेत को यदि काम न दिया जाय तो वह मुसीबत में डाल देता है वैसे मनुष्य भी मन को उसका काम कभी खत्म न होवे इसलिए धन और पद आदि से बिना पेंदे के पात्र की तरह-भरने में लगा देता है परन्तु कभी भी भरता नहीं है। मृत्यु से भयभीत मन काम चाहता है इसी में इसका अस्तित्व है। जबकि सत्य की खोज के लिए मन मरना चाहिये। क्रियाकांड से मन तृप्त होता है। पुराने समय में कर्मकाण्ड, पूजा, यज्ञ, हवन, जप आदि कर्म कहलाते थे, उसका ही वर्तमान रूप है सेवा करना, अन्नवस्त्रादि का दान करना, ये मन के स्थूल कर्म हैं। बहिर्मुखी मन का व्यक्तित्व कर्म को पकड़ में है।

[४] दूसरा मार्ग है ज्ञान योग–विचार करते रहिये, विचार करते २ एक दिन सत्य मिल जायगा यह ज्ञान योग कहता है, लेकिन विचार भी मन का ही सूक्ष्म कर्म है। जो अज्ञात, अपरिचित [सत्य-ईश्वर] है उसे विचार से कैसे जाना जा सकता है। विचार तो ज्ञात को ही जान सकता है इसलिए उसकी पकड़ में वही आता है जो ज्ञात और परिचित होता है। सत्य में वही तो है बाधा। कोई विचार मौलिक नहीं होता। सभी विचार क्षीण होने पर जो शेष रहता है वही है सत्य। कर्म में है शरीर, विचार में है मन। ज्ञान योग यह मन की ही गहरी पर्त है। इसलिए उससे सत्य उपलब्ध नहीं हो सकता।

[५] तीसरा मार्ग है भाव का–भाव [भक्ति] यह मन की ही अति सूक्ष्म केन्द्रीय ताकत है इसीलिए उसे पहचानना मुश्किल है। भाव जब विचार बनते हैं तब हम उसे पहचानते हैं और जब वे कर्म बनते हैं तब उसे दूसरे पहचानते हैं। भाव भ्रम भी पैदा करते हैं। सम्मोहन की शक्ति भाव में है। इसलिए यदि पूरे मन से भाव किया जाय तो इच्छित परिणाम भी आ सकता है। भाव मन का ही प्रोजक्शन है। वह संदेह, तर्क करने को मना करता है क्योंकि संदेह किया तो भाव गया। पूरी तरह समर्पण चाहता है। अमेरिका के चार विद्यार्थियों ने सम्मोहन की पुस्तकें पढ़कर अपने एक मित्र पर प्रयोग किया। उसे कमरे में बंद करके बाहर वे एकाग्रतापूर्वक भाव करते रहे—"बेहोश हो जा, बेहोश हो जा—करते रहे, करते रहे।" वह विद्यार्थी थोड़े समय में बेहोश हो गया। और अधिक प्रयोग करके देखना चाहा –'मर जा, मर जा' इस तरह मन में भाव करते रहे। सांझ को कमरा खोलकर देखा तो उसे मरा हुआ पाया। उनपर अदालत में मुकदमा भी हुआ लेकिन यह कार्य उन्होंने जान बूझकर नहीं किया था। सम्मोहन से ऐसा परिणाम भी आ सकता है। भाव के पास मन की प्रगाढ शक्ति है। स्त्री के पास तो भाव की और भी अधिक शक्ति है इसलिए ही वह संपूर्ण समर्पण करने में समर्थ होती है।

(६) इन तीनों में से कोई मार्ग नहीं है। मार्ग हमेशा दूर ले जाता है। इनसे सत्य नहीं मिलेगा। सत्य के लिए सभी मार्ग गिरा देने पड़ते हैं। सत्य तो है अस्तित्व इसलिए जो सभी मार्ग से उतर जाता है वही वहां पहुंच सकता है। लाओत्से ने कहा है—"खोज करने से नहीं मिलेगा, खोज छोड़ दो तो वह हाजिर ही है"। खोज तो निद्रा में स्वप्न समान है। परमात्मा तो हमारा

स्वभाव है। चारों तरफ वही है। उसमें ही जीना है। जीवन को खोजा नहीं जा सकता, वह जिया जरूर जा सकता है। जीवन जियें कैसे ?

एक नया अभिनेता मेरे पास आया। उसने पूछा —मैं कैसे सफल हो सकूँ उसका कोई सूत्र बताइये मैंने उसकी नोट में जो लिखा—जिन्दगी में आनन्द यदि पाना हो तो वह सूत्र आप भी नोट कर लीजिये—उसमें मैंने लिखा था—

"अभिनय ऐसा करें कि जैसे मानो अभिनय ही जिन्दगी है।

और जिन्दगी इस तरह जियें कि जैसे जिन्दगी एक अभिनय है।"

(७) सभी मार्ग छोड़ देना यही सत्य का मार्ग है। इसलिए यह मत पूछें कि मार्ग क्या है ? मार्गों को छोड़ दीजिये फिर देखें—जो होगा वही सत्य है। रुक जाना ही मार्ग है। ठिठक जाने पर जो क्रांति होगी वही है धर्म, वही है मार्ग प्रभु का।

इस प्रकार बाकी के तीन दिनों में ज्ञान, भक्ति और कर्म पर एक दिन में एक विषय को लेकर इतना सूक्ष्म विवेचन इतने सरल ढंग से किया कि उस आनन्द का वर्णन शब्दांकित नहीं किया जा सकता। टेप मिले तो सुन लीजियेगा। फिर कभी समय मिला तो लिखूंगा।

अब रात्रि की सिंहगर्जना भी संक्षेप में सुनिये। हजारों नर नारियों से खचाखच भरा हुआ शास्त्री-विद्यालय का प्राँगण आचार्य श्री का प्रवचन प्रारम्भ हुआ कि नीरव शांति से छा गया है। जूनागढ़ के जयवंती बहिन ने खूब धीर गंभीर निनादित स्वर से मंगलाचरण किया है। फिर आचार्य श्री बोले है। विषय है "नये समाज की खोज" प्रथम ही प्रश्न हुआ। समाज कहां है ? समाज तो कहीं नहीं है। व्यक्ति ही है। समाज तो व्यक्तियों का जोड़ है इसलिए समाज को खोजने का प्रश्न ही नहीं रहता, खोजने से मिलेगा भी नहीं। हां, नये व्यक्ति की खोज से नया समाज अवश्य पाया जा सकता है। मनुष्य को नया करना यानि व्यक्तित्व को ही बदलना। व्यक्तित्व को कैसे बदला जाय उसके कुछ सूत्र हैं जिन पर आने वाले दिनों में चर्चा करूंगा।

(१) व्यक्ति परिवर्तन के लिए प्रथम तो आदर्शों से मुक्ति होनी चाहिये। आदर्श यानी 'जो है' वह नहीं किन्तु 'जो होना चाहिये'। इसके कारण मनुष्य जो है वह हो नहीं पाता और दूसरे जैसा होने के प्रयत्न में स्वयं टूट जाता है।

(२) क्षण क्षण में सुख लेने की कला—प्रत्येक इन्द्रिय, शरीर जो हमें प्राप्त हुआ है उसे असार और दुःख रूप मानकर उसके साथ जो अत्याचार किया गया है इसी कारण जीवन दुख से भर गया है। जीवन तो है आनन्द उसकी झलक हमें इन्हीं इन्द्रियों द्वारा प्राप्त होती है। हम शाश्वत के आनन्द की खोज में क्षणिक को भूल गये हैं। क्षण क्षण सुख लेने की कला व्यक्तित्व को बदल देती है।

(३) चित्त को भयमुक्त करना—चित्त इतना भयभीत है कि वह पुराने की पकड़ में ही सुख मान रहा है। बिना चित्त की निर्भयता के मनुष्य का व्यक्तित्व बदल नहीं सकता।

चार दिनों तक प्रातः और सायं एक एक मुद्दे को लेकर गंभीर भाषण और साथ में पूछे गये प्रश्नों के उत्तर भी चलते रहे। बड़े अच्छे प्रश्न महत्व के पूछे गये जिनके उत्तर जनता को आनन्दपूर्ण, विस्मयकारी और आकामक भी लगते थे।

ता. ८ रविवार के दिन लायन्स क्लब राजकोट के संचालकों ने गुजरात के विचारकों को आमंत्रण देकर सम्मानित करने का आयोजन किया था जिसमें आचार्यश्री

को भी आमंत्रित किया गया था। संयोजकों ने आये हुए दसेक विचारकों का संक्षिप्त परिचय देकर उनका फूलहार और गरम शाल से स्वागत किया और प्रत्येक को अपने विचार और अनुभव जनता के समक्ष रखने का निवेदन किया। आचार्य श्री सुबह ज्ञान सत्र में एक घंटा बोल चुके थे और फिर भी बोलना पड़ा। सबसे प्रथम उनको ही बोलने दिया गया क्योंकि ११ बजे तक ही वहां रुकने की उन्होंने संयोजकों को सहमति दी थी। अपने वक्तव्य में विचार और दर्शन के संबंध में आधा घण्टा जो कहा वह बड़ा ही मार्मिक और विचारणीय था। उन्होंने कहा मुझे यहां भूल से बुला लिया गया है क्योंकि मैं कोई विचारक नहीं हूं। हम बहुत बार ऐसी भूल कर जाते हैं। बुद्ध, महावीर विचारक नहीं थे। वे दृष्टा थे। फिलासोफी का अर्थ भी दर्शन है। विचारक और दृष्टा में बहुत अन्तर है। विचारकों के पास मात्र विचार होते हैं—बासी और उधार। इसलिए विचार कभी भी सत्य को उपलब्ध नहीं होता। दर्शन बात ही अलग है। वह है अपनी अनुभूति। दो तीन संक्षिप्त दृष्टान्तों से अपनी बात इतनी सुन्दर और सरलतम ढँग से रक्खी कि सारी सभा मँत्रमुग्ध सुनती रही और विचारकों को भी विचार करने पर बाध्य कर दिया। प्रवचन समाप्त होते जनता ने तालियों से सारा कोनोट हाल गूंजा दिया।

●●●

आचार्य श्री ने कहा :

दो भाव

मैं पाप इसे नहीं कहता कि कोई
एक पत्नी से तृप्त नहीं होता,
मैं पाप इसे कहता हूं कि कोई
जिसे प्रेम नहीं करता
उसे पत्नी की तरह रखता है
और दुनिया से छुपकर
दूसरी स्त्री को भोगता है।

●

दो स्थिति

अंतर्स्फुरणा

मेरी दृष्टि में
आचार्य रजनीश एक बेहद खतरनाक व्यक्ति
का नाम है
जो सबसे, सब कुछ छीनकर
बाद में
अपने को भी छीन लेता है
और हमें बेसहारा छोड़ देता है
कौन जाने 'मरने के लिये'
या 'होने' के लिये—वह
जो हम हैं।

●●

—शिव

पत्र प्रेरणा

(युक्रांद निरन्तर यह प्रयत्न करता है कि आप तक पूज्य आचार्य श्री के पत्रों के माध्यम से जीवन के विभिन्न आयामों पर आचार्य श्री की जीवन दृष्टि का व्यापक परिचय दे। उसी क्रम में प्रस्तुत हैं यहां ऐसे ही कुछ अमूल्य पत्र)

१.

(सुश्री जयति शुक्ल, जूनागढ़ को लिखा गया पत्र :)

प्यारी जयति,
प्रेम। तेरा पत्र पाकर आनंदित हूं।
इतनी ही पीड़ा झेलना पड़ती है—यह तो प्रसव पीड़ा है न, स्वयं को जन्म की प्रसव पीड़ा।
और पीछे लौटना संभव नहीं है।
जहां लौटा जा सके, वह अतीत बचता ही कहां है ?
समय उन सीढ़ियों को सदा ही गिरा देता है जिससे चढ़कर कि हम वर्तमान तक आते हैं।
लौटना नहीं, बस आगे जाना ही संभव है।
आगे और आगे।
और अंतहीन है यह यात्रा।
मंजिल नहीं है, मुकाम नहीं है।
बस पड़ाव है क्षण भर के।
तम्बू हैं कि लग भी नहीं पाते और उखड़ना शुरू हो जाता है
और अव्यवस्था से भयभीत क्यों !
व्यवस्थाएँ मात्र झूठी हैं।
जीवन है अव्यवस्था —असुरक्षा।
और जिसे सुरक्षित होना है, उसे मरने के पहले ही मर जाना होता है।
लेकिन, मरने की जल्दी क्या है ?
वह कार्य तो मृत्यु स्वयं ही कर देगी। तब क्या ठीक नहीं है कि हम जी लें।
और आश्चर्य तो यह है कि जो जीना जान लेता है, मृत्यु उसका घर भूल जाती है।
क्योंकि, यही आवश्यक है।
माली बीज बोकर क्या चुपचाप प्रतीक्षा नहीं करता है ?

लेकिन जब भी मेरी जरूरत होगी तब तू पायेगी कि मैं सदा पास में ही हूं।
डा० को प्रेम।
वहां सबको प्रणाम।

रजनीश के प्रणाम
१७/२/७०

२.

(डा० एम० आर० गौतम, अध्यक्ष : संगीत विभाग, बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय को लिखे गए आचार्य श्री के पत्र)

मेरे प्रिय,
प्रेम। आपका पत्र मिल गया है।
प्रेम और दया में बहुत भेद है।
प्रेम में दया है।
लेकिन दया में प्रेम नहीं है।
इसलिए जो हो उसे हमें वैसा ही जानना चाहिए।
प्रेम है तो प्रेम—दया है तो दया।
एक को दूसरा समझना या समझाना व्यर्थ की चिंताओं को जन्म देता है।
प्रेम साधारणतः असंभव हो हो गया है।
क्योंकि मनुष्य जैसा है, वैसा ही वह प्रेम में नहीं हो सकता है।
प्रेम में होने के लिए मन का पूर्णतया शून्य हो जाना आवश्यक है।
और हम मन से ही प्रेम कर रहे हैं।
इसलिए हमारा प्रेम निम्नतम हो तो काम (Sex) होता है और श्रेष्ठतम हो तो करुणा (Compassion)।
लेकिन प्रेम काम और करुणा दोनों का अतिक्रमण है।
इसलिए जो है उसे समझें।
और जो होना चाहिए, उसके लिए प्रयास न करें।
जो है, उसकी स्वीकृति और समझ से, जो होना चाहिए, उसका जन्म होता है
लीना को प्रेम।
टूकन को आशीष।

रजनीश के प्रणाम
१५/२/१९७०

३.

मेरे प्रिय,
प्रेम। आपका पत्र मिला है।
मन को शांत करने के उपद्रव में न पड़ें।
वह उपद्रव ही अशांति है।
मन जैसा है—है।

उसे वैसा ही स्वीकार करें।
उस स्वीकृति से ही शांति फलित होती है।
अस्वीकार है अशांति।
स्वीकार है शांति।
और जो सर्व स्वीकार को उपलब्ध हो जाता है, वह प्रभु को उपलब्ध हो जाता है।
अन्यथा मार्ग ही नहीं है।
इसे ठीक से समझ लें।
क्योंकि, वह समझ (Understanding) ही स्वीकृति लाती है।
स्वीकृति हमारा संकल्प (Will) नहीं है।
संकल्प मात्र अस्वीकृति है।
जो 'मैं करता हूं' उसमें अस्वीकार छिपा ही है।
क्योंकि संकल्प है अहंकार।
और अहंकार अस्वीकार के भोजन के बिना नहीं जी सकता है।
इसलिए, स्वीकार किया नहीं जाता है।
जीवन की समझ स्वीकार ले आती है।
देखें—जीवन को देखें।
जो है—है।
जैसा है, वैसा है।
वस्तुयें ऐसी ही हैं (Things are such)।
अन्यथा न चाहें—क्योंकि चाहें तो भी अन्यथा नहीं हो सकता है।
चाह बड़ी नपुंसक है।
आह! और जहां चाह नहीं है, क्या वहां अशांति है?
लीना को प्रेम।
टूकन को आशीष।

रजनीश के प्रणाम
१६/२/१९७०

४.

(स्वामी मोहन चैतन्य, मोगा, पंजाब को लिखा गया एक पत्र)

मेरे प्रिय,
प्रेम।
स्वयं से लड़ें न।
जैसे हैं—हैं।
बदलने की चेष्टा न करें।
जीवन में तैरें नहीं—बहें
जैसे सरिता में सूखा—पत्ता।

साधना से बचें।
साधना मात्र से।
बस यही साधना है ?
जाना कहाँ है।
होना क्या है ?
पाना किसे है ?
जो है—वह अभी है, यहीं है।
कृपया रूकें और देखें।
किस प्रकृति को पशु प्रकृति कहते हैं।
क्या है निम्न ?
जो है – है।
न कुछ नीचा है, न कुछ ऊँचा है।
क्या है पाशविक ?
क्या है दिव्य ?
इसलिए न निंदा करें, न प्रशंसा
न स्वयं को कोसें और न स्वयं की पीठ थपथपायें।
सब भेद विचार के हैं।
सत्य में भेद नहीं है।
वहाँ प्रभु और पशु एक हैं।
स्वर्ग और नर्क एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।
संसार और मोक्ष एक ही अज्ञात को कहने के दो ढंग हैं।
और मेरी बातों को सोचना मत।
सोचा कि चूके।
देखना—बस देखना।

रजनीश के प्रणाम

५.

(श्री सरदारीलाल सहगल, अमृतसर, पंजाब को लिखा गया एक पत्र)

मेरे प्रिय–

प्रेम। विरह शुभ है। प्यास शुभ है। पुकार शुभ है।
क्योंकि आंसुओं के मार्ग से ही तो उसका आगमन होता है।
रोओ, लेकिन इतना कि रोना ही बचे और तुम न बचो।
रोने वाला मिट जाये और बस रोना ही बच रहे तो मंजिल स्वयं ही द्वार पर आ जाती है।
इसलिए ही रोका नहीं था और जाने दिया था।
जानता था कि पछताओगे।

लेकिन पछताने का मूल्य है ।
जानता था कि रोओगे ।
लेकिन रोने का उपयोग है ।
आंसुओं से ज्यादा गहरी प्रार्थना और क्या है ?
रवि को प्रेम ।
ओम को प्रेम
कंचन और मधु को प्रेम

रजनीश के प्रणाम

६.

(डा० रामचन्द्र प्रसाद, पटना को लिखा गया एक पत्र)

प्रिय रामचन्द्र
प्रेम । मेरी दस आज्ञायें (Ten Commandments) पूछी हैं ।
बडी कठिन बात है ।
क्योंकि, मैं तो किसी भी भांति की आज्ञाओं के विरोध में हूं ।
फिर भी, एक खेल रहेगा इसलिए लिखता हूं ।

१—किसी की आज्ञा कभी मत मानो जब तक कि वह स्वयं की ही आज्ञा न हो ।
२—जीवन के अतिरिक्त और कोई परमात्मा नहीं है ।
३—सत्य स्वयं में है, इसलिए उसे और कहीं मत खोजना ।
४—प्रेम प्रार्थना है ।
५—शून्य होना सत्य का द्वार है । शून्यता ही साधन है, साध्य है, सिद्धि है ।
६—जीवन है अभी और यहीं ।
७—जियो और जागे हुये ।
८—तैरो मत—बहो ।
९—मरो प्रतिपल ताकि प्रतिपल नये हो सको ।
१०—खोजो मत । जो है—है । रुको और देखो ।

रजनीश के प्रणाम

निवेदन

युक्रांद में प्रकाशन हेतु आपके पास आचार्य श्री के जो भी अप्रकाशित प्रवचन तथा पत्र हों, उन्हें संपादकीय कार्यालय में प्रेषित कर दें ताकि उनका लाभ अधिक से अधिक प्रेमी भाइयों को पहुंचाया जा सके ।

—संपादक

आचार्य श्री के आगामी देश व्यापी कार्यक्रम

दिनांक	स्थान	कार्य-क्रम	संयोजक
१६ अप्रेल ७०	कलकत्ता	महावीर जयती	श्री जुगमंदिर दास जैन, रूम नं० १६१, १५७, नेताजी सुभाष रोड कलकत्ता--१ फोन ३४--१६६४
२, ३, ४ एवं ५ मई, ७०	नारगोल	साधना शिविर	श्री ईश्वर बाबू, जीवन जागृति केंद्र, रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग, डा० डी० एन० रोड, बंबई--१ फोन २६४५३०

(नोट : दिनांक २५ एवं २६ अप्रेल के जबलपुर प्रवचन के कार्यक्रम आचार्य श्री की अन्यत्र कार्यों में व्यस्तता के कारण केन्सिल कर दिए गए हैं।)

जीवन संगीत से आलोकित : नई साज सज्जा में

ज्योति शिखा

(आचार्य श्री के विचारों की आध्यात्मिक त्रैमासिकी)

संपादक : श्री महिपाल

मूल्य : वार्षिक : ५ रु०
एक प्रति : १।२५ न० पै०

प्रकाशक : जीवन जागृति केन्द्र,
रूम नं० ५३, एम्पायर बिल्डिंग,
डा० डी० एन रोड, बंबई : १

एक शुभ समाचार :

आचार्य श्री की ज्योतिर्मय वाणी का मासिक बुलेटिन

सिंहनाद

(गुजराती भाषा में)

मूल्य : वार्षिक २ रु०
एक प्रति २० न. पै.

(शीघ्र सदस्यता ग्रहण करके पावन आयोजन में योगदान कीजिए)

प्रकाशक : श्री नटु भाई ए० मेहता,
युकांद एवं जीवन जागृति केन्द्र परिवार,
२१, संस्कार सोसाइटी, टैगोर रोड,
सुरेन्द्र नगर।

SYNTROFIX PIGMENT EMULSION PASTES

FOR

UNSURPASSED BRILLIANCY OF YOUR PRINTS

Available in variety of Shades :

SYNTROFIX BRILLIANT LEMON—YELLOW

GOLDEN—YELLOW

ORANGE

GREEN

BLUE

RED

BROWN

BLACK

Manufacturers :

SYNDET PRIVATE LIMITED

OFFICE : Prajapati Building, Khadia Char Rasta, AHMEDABAD No. 1

Tele. : 23682

FACTORY : Dudheshwar Road, Opp. Rustom Mills, AHMEDABAD No. 1

Tele :25732

वर्षों से हम

अपनी श्रेष्ठतम सेवायें

प्रस्तुत कर रहे हैं

धुम्रपान के अनोखे आनंद के लिये

नंबर

22

छाप बिड़ी

पीजीये.

निर्माता वृजलाल मणीलाल एन्ड कं. गोंदिया.

तुलसी मानस प्रकाशन

गुप्ता मिल्स स्टेट, बम्बई-१०

श्री हरिकिशनदास अग्रवाल द्वारा लिखित :–

१. **संसार का सार** (मू. रु. ३) आधुनिक खेलों, वैज्ञानिक साधनों, जीव जन्तुओं, वनस्पतियों विभिन्न व्यवसायक व्यक्तियों तथा पदार्थों आदि के द्वारा अध्यात्म शिक्षा देने का यह प्रयत्न नवीन होते हुये अपने प्रस्तुतीकरण के ढंग और साथ ही विवेचन के संदर्भ में एक नवीनता को लिए हुये है। —नवभारत टाइम्स, बम्बई

२. **ज्ञान साधना** (मू. रु. २) लोनावाला शिविर में पधारे हुए महापुरुषों के ज्ञानसाधना के प्रति संकेत।

३. **विज्ञान से ज्ञान** (मू. रु. १) ऐक्सरे इत्यादि आधुनिक उदाहरणों को लेकर अध्यात्मविद्या नवयुवकों तक पहुंचाने का सफल प्रयास है।

४. **वेदान्त नवनीत** (मू. १.५० पैसे) सन् १९६४ के अमृतसर के वेदान्त सम्मेलन में पधारे हुए महात्माओं के प्रवचनों का सार है।

५. **वेदान्त का सरल बोध** (मू. रु. १) वेदान्त के क्लिष्ट ग्रन्थों के सिद्धान्त बड़े ही सरल उदाहरणों द्वारा समझाकर पाठकों के सामने रखे गये हैं।

६. **आध्यात्मिक पिक्टोरियल** [हिन्दी व अंग्रेजी] (मू. रु. ३) इस पुस्तक में ज्ञान की गम्भीर बातों को सूत्र रूप में बाँध कर उन्हें चित्र द्वारा प्रस्तुत किया गया है। वाक्य हिन्दी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं में हैं।

७. **मुमुक्ष** [आध्यात्मिक उपन्यास] (मू. रु. ३) आध्यात्मिक दृष्टि से पात्रों के जीवन किस प्रकार उपन्यास पाठकों की भौतिक दृष्टि को बदल सकते हैं, इस विषय में एक अत्यन्त ही नया प्रयोग है।

८. **मन की शांति** [पद्य] (मू. रु. ४) अंग्रेजी मूल रचना 'पीस आफ माइण्ड' का अनुवाद, जिसमें मन को शान्ति देने वाली गहन आध्यात्मविद्या को सरल भाषा में पद्यबद्ध किया गया है।

९. **हमारी परम्परा** (मू. २ रु.) हमारी ऋषि परम्परा क्या है और उसे जीवन में किस प्रकार उतारा जाए—

और

आध्यात्मिक मासिक

म न न

जिसमें प्रति मास भारत के उच्चकोटि के विद्वानों के लेख एवं प्रख्यात संत-महात्माओं की अनुभव-पूर्ण वाणी को संकलित कर पाठकों तक पहुंचाया जाता है।

एक प्रति ४० पैसे

वार्षिक ४ रु० दो वार्षिक ७ रु० तीन वार्षिक १० रु०

चार वार्षिक १२ रु० और पांच वार्षिक १५रु०

उत्तम तम्बाखू और कुशल कारीगरों से बनी

शेर और पहलवान छाप बिड़ी

भारत में अग्रणी है

मोहनलाल हरगोविंददास

जबलपुर म० प्र०

मानसेवी संपादक : अरविन्द कुमार । सह-संपादक : आलोक कुमार पाण्डे । व्यवस्थापक : श्री आर. आर. मिश्रा

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्द कुमार, कमला नेहरू नगर, जबलपुर ।

मुद्रण : जबलपुर को-आपरेटिव प्रिंटिंग प्रेस, गोलबाजार, जबलपुर से मानसेवी संपादक अरविन्द कुमार के लिये मुद्रित

वर्ष : १ ।। अंक : २० ।। १६ अप्रेल १९७० ।। मूल्य : एक प्रति : ०.६० न० पै० ।।

।। वार्षिक : १२ रु० ।।

आचार्य श्री के साहित्य की एक नवीन सर्जना : 'सत्य की पहली किरण'

अब प्रकाशित होकर आपके जीवन को आलोकित करने हेतु उपलब्ध है

चित्र : दीनू रावल, राजकोट